चन्दामामा
फ़रवरी १९७४
1 Re

Photo by: P. V. SUBRAMANYAM

राम और श्याम पॉपिन्स : चोर को पकड़ते हैं
रात अँधेरी सुनसान, नींद में खोये राम-श्याम
चोर आया घर में, फँसे दोनों मुसीबत में
चोर ने न चाहा धन, पॉपिन्स पर था उसका मन
कुत्ता भौंका...भौं भौं भौं, चोर चौंका...चौं चौं चौं
राम ने मचाया शोर, पकड़ा गया चोर
चखना होगा जेल का मज़ा, तेरे लिए यही सज़ा
राम-श्याम का बना काम, पॉपिन्स का मिला इनाम
रसीली प्यारी मज़ेदार
५ फलों के स्वाद—रास्पबेरी, अनानास, नींबू, नारंगी व मोसंबी.
हर पॅकेट में १३ गोलियां
PARLE POPPINS
पारले
पॉपिन्स
फलों के स्वादवाली गोलियां
everest/508b/PP HN

२ वेलेसली प्लेस, कलकत्ता-७०० ००१

बढ़ते बचपन का साथी – इन्क्रिमिन*!

इन्क्रिमिन टॉनिक – बढ़ते बच्चों के लिये वरदान!

डॉक्टरों का विश्वासपात्र नाम Lederle सायनामिड इन्डिया लिमिटेड का एक विभाग।

*अमेरिकन सायनामिड कम्पनी का रजिस्टर्ड ट्रेडमार्क।

SISTAS-INC-3068A HIN

पालन-पोषण सही कीजिए;
बच्चों को बोर्नविटा दीजिए!

पढ़ने लिखने में सर्वश्रेष्ठ... खेलकूद में आगे

पढ़ने और खेलने में बच्चों की खर्च हुई शक्ति की सही पूर्ति न हो तो इनका मानसिक और शारीरिक विकास अधूरा रह जाता है। रोज बोर्नविटा पीने से बच्चों की शक्ति बनी रहती है।
पौष्टिक **कोको**, दूध, मॉल्ट और शक्कर के मिश्रण से बना हुआ बोर्नविटा बहुत ही स्वादिष्ट होता है।

शक्ति, उत्साह और
स्वाद के लिए–*कॅडबरिज* **बोर्नविटा!**

फरवरी १९७४ से
‘चन्दामामा’ का मूल्य एक रुपया

आजकल देश में प्रतिनित्य सभी वस्तुओं के मूल्य बढ़ते जा रहे हैं। कागज़ का मूल्य तो हद से ज्यादा बढ़ गया है। हम कल्पना भी नहीं कर सकते कि यह बढ़ती कहाँ तक जाकर रुकेगी! ऐसी विषम स्थिति में भी हम ‘चन्दामामा’ का मूल्य बढ़ाये बिना आज तक उसी पुराने मूल्य पर देते आ रहे हैं, पर अब हम मूल्य बढ़ाने के लिए विवश हैं। इसलिए फ़रवरी ’७४ के अंक से हम सिर्फ़ दस पैसे मात्र बढ़ाकर ‘चन्दामामा’ का मूल्य एक रुपया निर्द्धारित कर रहे हैं। हम विश्वास करते हैं कि इस छोटे से परिवर्तन को हमारे सहृदय पाठक, हितैषी और एजेंट बड़ी प्रसन्नता के साथ स्वीकार करेंगे और पूर्ववत् हमें अपना सहयोग देंगे।

—प्रकाशक
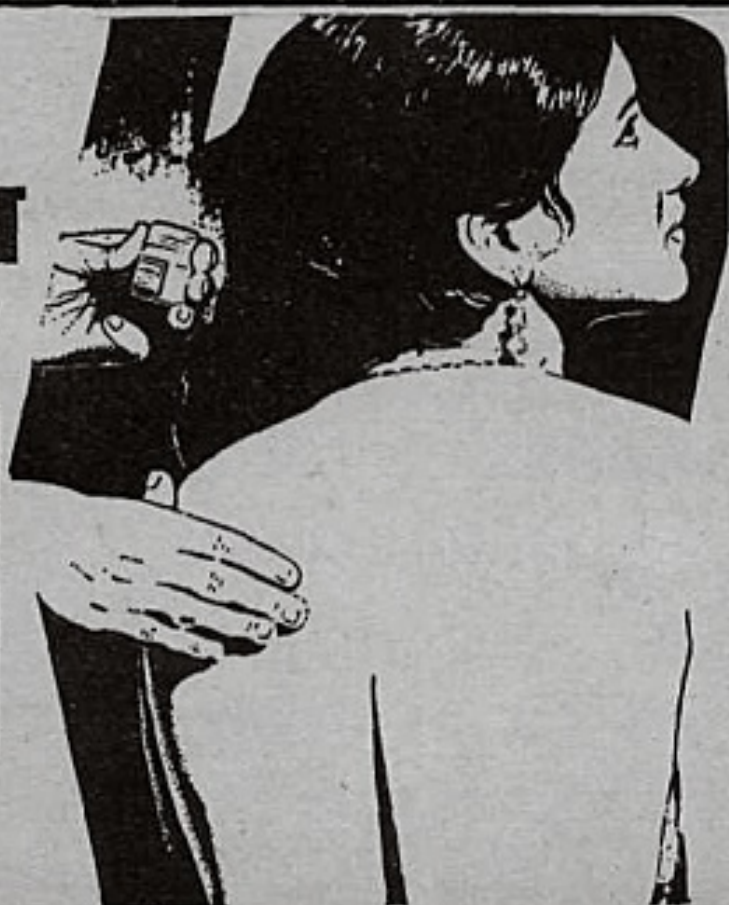
चन्दामामा
संस्थापक : नागिरेड्डी
संचालक : 'चक्रपाणी'
हमने इसके पूर्व एक-दो बार सूचित किया था कि फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता के हेतु विचारार्थ पाठक अपनी परिचयोक्तियाँ सिर्फ कार्ड पर ही भेजा करें, किंतु इसके बावजूद भी अनेक पाठक अपनी परिचयोक्तियाँ लिफाफों तथा अंतर्देशीय पत्रों के द्वारा भेज रहे हैं, जिससे हमें शीघ्र चयन करने व चुनाव करने में कठिनाई हो रही है। अत. कृपया भविष्य में अपनी परिचयोक्तियाँ कार्ड पर ही भेजा करें।
वर्ष : २८ फ़रवरी १९७४ अंक : ८
CP
CHITRA

चिता चिता द्वयोर्मध्ये
चिंता नाम गरीयसी;
चिता दहति निर्जीवम्,
चिंता प्राणयुतम् वपु:　　　　　।। १ ।।

[चिता से चिंता बढ़कर है। चिता जहाँ प्राणहीन शरीर को जलाती है, वहाँ चिंता प्राणवान शरीर को जलाती है।]

अजगाम यदा लक्ष्मी:
नारिकेलफलांबुवत्,
निर्जगाम यदा लक्ष्मी:
गजभुक्त कपित्थवत्　　　　　।। २ ।।

[संपत्ति जब आती है, तब नारियल में पानी की तरह आ जाती है, पर जब जाती है, तब हाथी के द्वारा निगाले गये कपित्थ की तरह गायब हो जाती है।]

असारे खलु संसारे
सारम् श्वशुर मंदिरम्
हिमालये हर श्शेते,
हरि: शेते महोदधौ　　　　　।। ३ ।।

[सारहीन संसार में ससुराल अत्यंत सुखदायक है। (इसीलिए) शिवजी (पार्वती की जन्मभूमि) हिमालय पर्वत पर, विष्णु (लक्ष्मी की जन्मभूमि) समुद्र पर निवास करते हैं।]

कष्ट - सुख

यक्ष पर्वत

[२०]

[समरबाहु के अनुचरों ने एक भाला फेंक कर बीरपुर के सेनापति को घायल बनाया। उसके सैनिक पहाड़ पर चढ़कर दुश्मन का अंत करना चाहते थे, मगर जंगलियों के द्वारा उकसाये गये सिंह और बाघों ने उन्हें तितर-बितर कर दिया। स्वर्णाचारी ने ऊँटों पर भाग जाना चाहा, तब वीरपुर के सैनिकों ने उनका सामना किया। बाद—]

स्वर्णाचारी ने तलवार खींचकर वीरपुर के घुड़ सवारों पर अपने ऊँट को उकसाया तब समरबाहु के अनुचर उत्साह में आ गये और वे वीरपुर के सैनिकों पर टूट पड़े। इस पर दोनों दलों के बीच भयंकर युद्ध हुआ। ऊँटों पर सवार हुए समरबाहु के अनुचर तलवारों तथा भालों से वीरपुर के सैनिकों को सताने लगे। घुड़ सवार भी हिम्मत के साथ अपने अपने दुश्मन पर भाले चलाते अपने राजा की जयकार करने लगे।

पांच-छे मिनट तक लड़ाई होती रही, इस बीच समरबाहु के सैनिक तथा वीरपुर के सैनिक भी घायल हो अपने वाहनों पर से नीचे गिर गये। वीरपुर के सैनिकों के घोड़ों ने कभी ऊँटों को देखा न था, इसलिए वे भड़क कर दूर भाग गये। वे दुश्मन को घेरकर उनका अंत करना

चाहते थे, पर वे अपने प्रयत्न में सफल न हो सके। स्वर्णाचारी के अनुचरों में केवल पंद्रह-सोलह बच रहे थे, बाक़ी लोग लड़ाई में काम आये. बचे हुए लोगों को सचेत करके दुश्मन के सैनिकों के बीच अपना रास्ता बनाकर निकट के जंगल की ओर वे भाग खड़े हुए।

उस वक़्त वीरपुर का सेनापति वहाँ आ पहुँचा, उसने भगानेवाले स्वर्णाचारी तथा उसके अनुचरों को देख अपने अनुयायियों को डाँटा–"इतने थोड़े से शत्रु सैनिक हमारे चक्र व्यूह को तोड़कर भाग गये, इस से बढ़कर हमारे लिए अपमान की बात क्या हो सकती है?"

तब तक वहाँ पर स्वर्णाचारी को घेरने के लिए वीरपुर के अश्वदल का नेता आ पहुँचा और अपने सेनापति की आवाज़ सुनते ही घोड़े पर दौड़ा आया, उसे प्रणाम करके बोला–"साहब, हमने कई शत्रु सैनिकों का वध किया है, बाक़ी लोग जंगल में भाग गये हैं।"

"उनके भागते मैंने भी देखा है। उनका पीछा करके उन्हें बन्दी बनाना छोड़ तुम यहाँ पर क्या कर रहे हो?" सेनापति ने क्रोध पूर्ण स्वर में पूछा।

"साहब, मैंने सोचा था कि हमारे घायल सैनिकों के इलाज का प्रबंध करके कुछ और घुड़ सवारों को साथ ले जंगल में जाकर शत्रु का संहार करूँ?" अश्वदल के नेता ने जवाब दिया।

"क्या तुम सोचते हो कि ये सारे प्रबंध करके अच्छा मुहूर्त देख जब तुम शत्रु की खोज में जाओगे, तब तक वे जंगल में किसी पेड़ की छाया में तुम्हारा इंतजार करते बैठे रहेंगे? हमारे राजा को यह खबर मालूम हो जाएगी कि एक चोटीवाला वीरपुर के कई सैनिकों को मारकर जंगल में भाग गया है, तो हमारे राजा क्या कहेंगे? तुम्हें और मुझे भी फाँसी की सज़ा निश्चित है।" सेनापति ने गरज कर कहा।

"महाशय, वह चोटीवाला साधारण व्यक्ति नहीं है। मैंने सुना है कि उसके अनुचर उसे महामंत्री पुकारते हैं। वह रूपरेखाओं तथा परक्राम में महाभारत के..."

अश्वदल के नेता की बात को काटते हुए सेनापति ने डांटकर कहा–"अब तुम अपनी कविता बंद करो। चार-पांच घुड़ सवारों को साथ ले तुम तुरंत निकल जाओ और चोटीवाले उस कमबख्त तथा उसके अनुचरों का पीछा करो, इस बात का ख्याल रखो कि वे तुम्हारी आँखों से ओझल होने न पावे। मैं पहले इस पहाड़ी दुर्ग पर अधिकार कर लूंगा। उस पर वीरपुर की पताका फहरा दूंगा। तब बाक़ी सेना के साथ तुम से मिलूंगा।"

अश्वदल के नेता ने सेनापति को प्रणाम किया, और चार-रांच घुड़ सवारों को साथ ले स्वर्णाचारी की खोज में जंगल की ओर चल पड़ा।

मगर स्वर्णाचारी तब तक जंगल में बहुत दूर निकल गया था। उसका विचार था कि किसी तरह खड्गवर्मा, जीवदत्त और समरबाहू का पता लगा ले और उन्हें पहाड़ी दुर्ग के हाथ से निकल जाने का समाचार सुना दे। वह जानता था कि भालू जाति के लोग उस प्रदेश में कहाँ रहते हैं, इसलिए स्वर्णाचारी उस दिशा में चल पड़ा और थोड़ी देर में वह एक तालाब के पास पहुँचा।
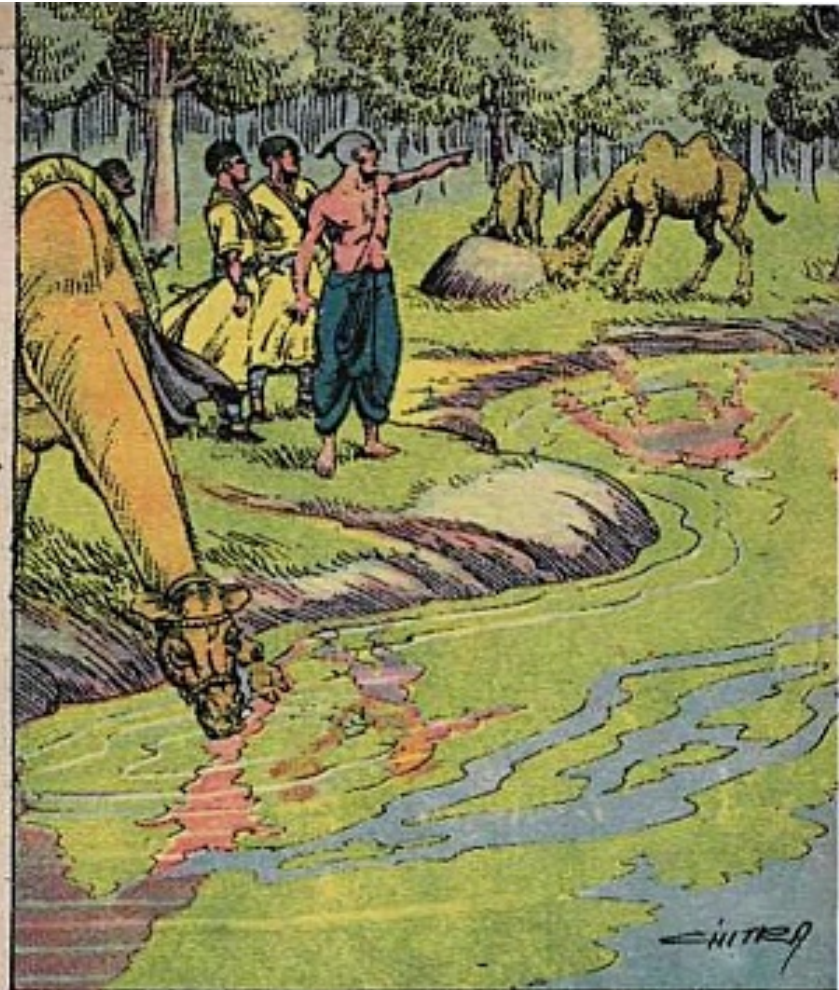
सब वहाँ ऊँटों पर से उतर पड़े। ऊँटों को पानी पिलाकर उन्हें चरने के लिए छोड़ दिया। तब स्वर्णाचारी ने अपने दो अनुचरों को एक ऊँचे पेड़ पर चढ़वा कर कहा–"सुनो, वीरपुर के सैनिक या घुड़ सवारों का हमारी खोज में इस ओर आने का खतरा है। उनके आने का समाचार हमें पहले ही मिल जाना आवश्यक है। अगर दुश्मन के थोड़े से सैनिक आये तो उनका वध करके उन्हें यहीं पर गाड़ देंगे, यदि अधिक संख्या में आ गये तो हम इस प्रदेश को छोड़ दूसरी

जगह चले जायेंगे। इसलिए तुम लोग सावधान होकर आस-पास के प्रदेशों को देखते रहो।"

आधा घंटा बीत गया। पेड़ पर बैठे शत्रु की टोह लेनेवालों में से समरबाहू के एक अनुचर ने देखा कि भालू दल के दस-बारह लोग बिना आगा-पीछा देखे तालाब की ओर भागे जा रहे हैं। तब पेड़ पर से एक व्यक्ति जल्दी-जल्दी नीचे उतर आया और उसने स्वर्णाचारी के पास जाकर सारा समाचार सुनाया।

स्वर्णाचारी ने अपने अनुचरों को सचेत किया और उन सबको साथ लेकर तालाब के बाजू में स्थित झाड़ियों में जा छिपा। तब उसने कहा–"हम जिनकी खोज में थे, वे ही लोग इस ओर चले आ रहे हैं। इन्हीं भालू दल के लोगों ने हमारे राजा समरबाहू को बन्दी बनाया था।"

इतने में भालू दल के लोग तालाब के निकट आ पहुँचे। उनमें से एक ने पेड़ों के नीचे घास चरनेवाले ऊँटों को देखा। वह आपाद मस्तक कांप उठा और चिल्लाया–"वृकेश्वरी माता, हमें बचाओ।" उसने बाक़ी लोगों को ऊँटों को दिखाया।

भालू दल के लोग पल भर के लिए जड़वत खड़े रह गये। वे सब भयकंपित हो सोच ही रहे थे कि क्या किया जाय, तभी स्वर्णाचारी अचानक समरबाहू के अनुचरों के साथ उन पर हमला कर बैठे और दो व्यक्तियों को भाले से चुभोया। वे दोनों चिल्ला पड़े–"वृकेश्वरी माता, हम मर गये।" यों कहते वे नीचे गिर गये। तभी भालू दल के पांच-छे व्यक्ति हथियार डालकर उनके अधीन हो गये। बाक़ी लोग शेर को देख भागनेवाले हिरणों की भाँति वापस भाग गये।

इस तरह भालू दल के जो लोग भाग गये, उन्हीं लोगों ने तालाब की ओर आनेवाले खड्गवर्मा, जीवदत्त, समरबाहू तथा गुरु भल्लूक से मिलकर उन्हें स्वर्णाचारी का समाचार दिया।

"कहीं क़िले के निर्माण में लगे स्वर्णाचारी इस तालाब के प्रदेश में क्यों आये हैं? यह बात मुझे अत्यंत आश्चर्यजनक मालूम होती है! पहाड़ पर किसी विपत्ति में फंसने के कारण वह कहीं भगकर तो नहीं आये हैं?" जीवदत्त ने कहा।

"स्वर्णाचारी बड़ा ही राज भक्त है। शायद वह मुझे भालू जाति के दल से बचाने के लिए वहाँ पर आया होगा।" समरबाहू ने तृप्ति के साथ कहा।

यह बातचीत गुरु भल्लूक की समझ में न आयी। वह यह सोचकर डर गया कि उसे नये लोगों के द्वारा खतरा पैदा होनेवाला है। तब खड्गवर्मा तथा जीवदत्त को प्रणाम करके बोला—"साहब, आपने मुझे प्राणदान करने का अभय दिया है। यह बात कृपया मत भूलिये।"

गुरु भल्लूक की बातें सुन जीवदत्त हँस पड़ा और बोला—"गुरु भल्लूक! तुम्हें हमारे द्वारा और तालाब के पास रहनेवाले इस समरबाहू के अनुचरों के द्वारा भी कोई खतरा पैदा न होगा। डरो मत।"

"साक्षात् बृकेश्वरी देवी की कृपा तुम पर है, इसलिए तुम डरते ही क्यों?" खड्गवर्मा ने परिहास पूर्वक कहा।

वे सब इस प्रकार वार्तालाप करते तालाब के पास पहुँचे, उस वक़्त स्वर्णाचारी

भालू जाति के जो लोग उसके हाथ बंदी हो गये थे, उनसे दर्याफ़्त कर रहा था कि समरबाहू कहाँ पर है! उसने खड्गवर्मा, जीवदत्त और समरबाहू को दूर पर आते देखा, उत्साह में आकर उनके पास दौड़ कर आया, झुक कर प्रणाम करके बोला-"महाराजा समरबाहू और क्षत्रिय योद्धाओ, आप सब को मेरे प्रणाम।"

जीवदत्त ने स्वर्णाचारी का कंधा थपथपाते पूछा—"स्वर्णाचारी, लगता है कि तुम अपने महाराजा के क़िले को छोड़ जंगल में विहार करने आये हो!"

"क्षत्रिय वीरो, वह क़िला दुश्मन के

हाथों में पड़ गया है। उसे बचाने के लिए मैंने और समरबाहू के अनुचरों ने अपनी तरफ़ से पूरी कोशिश की। उस कोशिश में हमारे कुछ अनुचर वीर स्वर्ग को प्राप्त हुए हैं।" स्वर्णाचारी ने चिंता भरे स्वर में कहा।

"भाई, कम से कम कुछ लोग बच जाते तो भविष्य में तुम्हारे होनेवाले राजा की मदद करने का उन्हें मौक़ा मिला होता। अब बचे हुए लोग यहाँ पर कितने हैं?" खड्गवर्मा ने पूछा।

स्वर्णाचारी ने अपने साथ तालाब के पास आये हुए समरबाहू के अनुचरों की ओर देख कहा—"मुझे भी साथ मिलाकर कुल सोलह लोग हैं। हमारे वाहन सोलह ऊँट भी यहीं पर हैं।"

"हमारे पहाड़ी दुर्ग पर दुश्मन ने अधिकार कर लिया! कैसे वे लोग अधिकार कर सके? वह दुश्मन कौन है?" समरबाहू ने दांत पीसते मूंछ पर ताव देते पूछा।

स्वर्णाचारी ने, वीरपुर के चिड़िया घर के अधिकारी का जंगल में प्रवेश करना, वीरपुर के सैनिकों का दुर्ग को पकड़ने का प्रयत्न करना, उस युद्ध में उसकी पराजय और बचे हुए अनुचरों के साथ जंगल में भाग जाना, इत्यादि सारी बातें संक्षेप में कह सुनायीं।

सारी बातें सावधानी से सुनकर समरबाहू ने गहरी सांस ली और कहा—"इसका मतलब है कि क़िले के साथ बहुत समय से हमारा संग्रह किया हुआ धन और अनाज शत्रु के हाथों में पड़ गया है? वीरपुर के राजा को क्षमा नहीं करनी है। उसका अंत करना है! हे क्षत्रिय वीर! आपको मेरी सहायता करनी होगी। मैं आपकी शरण चाहता हूँ।"

जीवदत्त ने समरबाहू की ओर सहानुभूति पूर्ण दृष्टि से देखा, कुछ कहने को था, तभी खड्गवर्मा ने क्रोध में आकर कहा—"समरबाहू, अब तुम्हें कैसी विपत्ति आ

गयी है, जिस के लिए तुम हमारी शरण मांगते हो? हमने भालू जाति के दल से तुम्हारी रक्षा करने का वादा किया और हमने अपने वचन का पालन किया। अब हम अपने रास्ते विन्ध्यपर्वतों में जाना चाहते हैं। वहाँ पर हमें एक शिला रथ को हिलाना होगा। मगर हमारे रास्ते में दूसरों को खतरों से बचाने और उनकी मदद करने में हमारा बहुत सा समय खर्च हो गया। अब हम अपना काम देखना चाहते हैं।"

जीवदत्त ने खड्गवर्मा की पीठ थपथपा कर उसे जल्दबाजी न करने की सलाह देते हुए कहा—"समरबाहू, तुम ने राज्य का संपादन कर उसे तो खो न दिया जिसके लिए तुम वीरपुर के राजा से बदला ले सको। तुम इस महान जंगल में जहाँ भी अपने अनुचरों के साथ आराम से फ़सल पैदा कर जी सकते हो न?"

इस पर समरबाहू ने कोई जवाब नहीं दिया, उसने केवल अपना सिर झुका लिया। तब स्वर्णाचारी ने बीच में दखल देते कहा—"क्षत्रिय वीर! आप लोगों से मेरी एक बिनती है! कृपया आप इस पर ध्यान दीजिए। मुझे ऐसा मालूम होता है कि समरबाहू अपने नाम को लेकर किसी चंद्रवंश के मालूम होते हैं। ऐसे व्यक्ति का कहीं राज्य स्थापित करके देख उनके यहाँ मत्री का पद संभालने की मेरी इच्छा हो रही है! आप लोग मेहर्बानी करके हमारी सहायता करे तो कम से कम हम उस वीरपुर के राजा को उस पहाड़ी प्रदेश से भगा सकते हैं। तब वह पहाड़ी दुर्ग और उसके आस-पास के जंगली लोगों के गाँवों को मिलाकर वह एक छोटा राज्य बन सकता है।"

इस पर जीवदत्त ने खड्गवर्मा की ओर देखा और कहा—"खड्गवर्मा! मैं समझता हूँ कि यह सहायता करना उत्तम होगा।" फिर समरबाहू तथा स्वर्णाचारी की ओर मुड़कर समझाया—"पहले हमें

यहाँ पर आये हुए वीरपुर के सैनिकों पर हमला करना होगा। हमारी संख्या थोड़ी सी है, इसलिए हम सीधे उनका सामना नहीं कर सकते, हमें तो किसी उपाय के द्वारा ही उन्हें हराना होगा। इसके लिए एक अच्छा उपाय है। उन सारे सैनिकों को हमें गुरु भल्लूक के बिल दुर्ग में प्रवेश कराना होगा।"

"यह कैसे संभव है, जीवदत्त प्रभु? उन्हें उस बिल में कैसे प्रवेश करा सकेंगे?" स्वर्णाचारी ने पूछा।

तब जीवदत्त ने समझाया—"इसके लिए जो उपाय है, वह यह कि गुरु भल्लूक के शिष्यों में से एक-दो व्यक्ति वीरपुर के सैनिकों के पास जाकर उनके नेता से बतावें कि हम सब दुर्ग के बिल में छिपे हुए हैं, तब वे लोग हमारा वध करने के लिए बिल में प्रवेश करेंगे। उस वक़्त हम उनका काम तमाम कर सकते हैं।" तब जीवदत्त ने गुरु भल्लूक से कहा—"भल्लूक, यह बताओ कि तुम्हारे शिष्य तुम्हारे आदेश का ज्यों का त्यों पालन करेंगे या गुरु के साथ दगा देनेवाले हैं?"

यह सवाल सुनते ही गुरु भल्लूक आवेश में आया और बोला—"हुज़ूर! मैं अपने शिष्यों की गुरु भक्ति अभी साबित कर देता हूँ; मैं आज्ञा दूँ तो मेरे शिष्य पहाड़ की चोटी पर से नीचे कूदने के लिए तैयार हो जायेंगे। यहाँ पर पहाड़ नहीं है, इसलिए सामने देखनेवाले उस ऊँचे पेड़ की डाल पर से नीचे कूदने की आज्ञा देता हूँ।" यों कहकर पास में स्थित एक अनुचर से बोला—"अरे शिष्य, तुम उस पेड़ की सब से ऊँची डाल पर चढ़ जाओ और वहाँ से औंधे मुँह नीचे गिर जाओ।"

जीवदत्त रोक ही रहा था कि तभी एक व्यक्ति दौड़ता गया, सौ फुट ऊँचे एक पेड़ पर चढ़ गया, वहाँ से चिल्ला उठा—"गुरु भल्लूक!" तब अपने हाथ ढीला करके औंधे मुँह नीचे गिर पड़ा।

(और है)
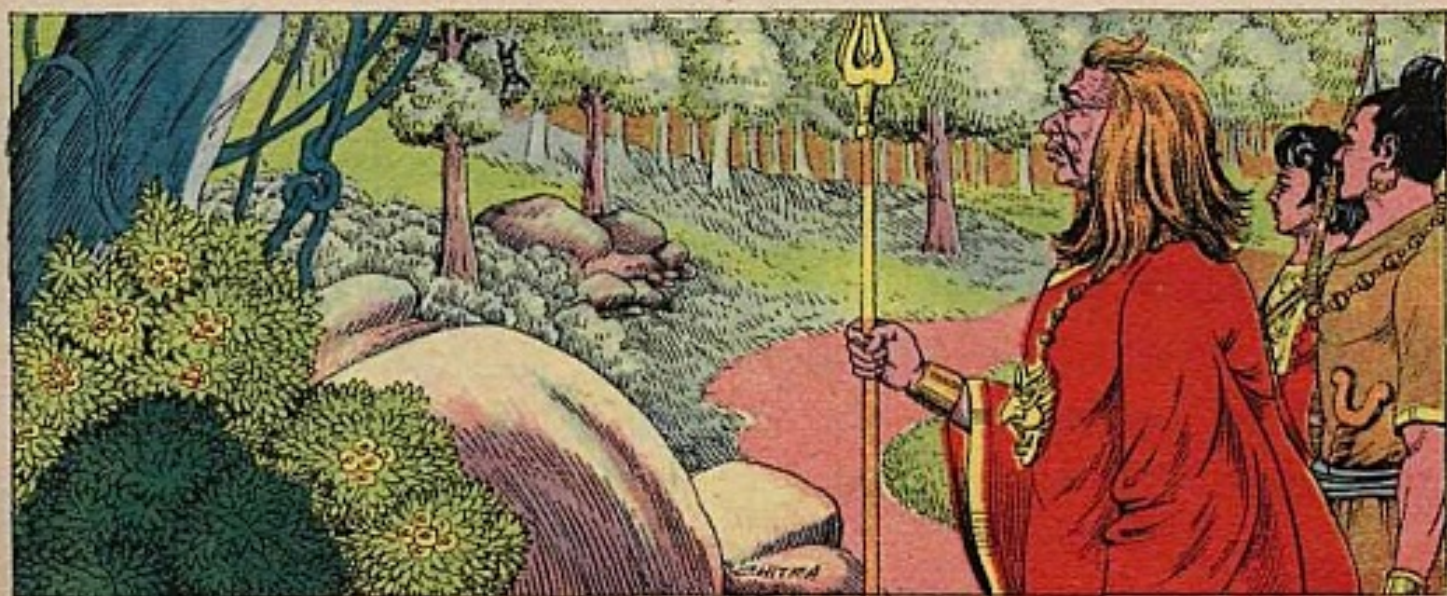
देवताओं का प्रकोप

हठी विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आया, पेड़ से शव उतार कर कंधे पर डाल सदा की भाँति चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा, तब शव में स्थित बेताल ने कहा—"राजन्, देवता की निंदा अनेक विपदाओं का कारण बन जाती है। तुम्हारे इस श्रम का कारण देवता की निंदा तो नहीं? देवताओं की निंदा करके अनेक यातनाएँ भोगनेवाले यौधेयश्रृंग की कहानी में तुम्हें सुनाता हूँ। श्रम को भुलाने के लिए सुनो।"

बेताल यों कहने लगा: प्राचीन काल में सिंधु प्रदेश के जंगलों में अनेक जंगली जातियों के लोग निवास करते थे। वे जंगलों में घूमते, जानवरों का शिकार खेलते असभ्य जीवन बिताया करते थे। उन जातियों में श्रृंग नामक एक व्यक्ति पैदा हुआ; उसकी शक्ति, साहस और

बेताल कथाएँ

थे। वे दुर्ग बनाकर उनके बीच निर्भयता और निश्चिततापूर्वक जीवन यापन करते थे, वे दूसरों के मामलों में बिलकुल दखल न देते थे।

श्रृंग ने अपनी जाति के लोगों को महान योद्धा बनाया और मायावों के दुर्गों पर हमला किया। मायावों ने पहले अपनी मायाओ के द्वारा यौधेयों को चकित कर दिया, मगर श्रृंग की शक्ति और युक्तियों के सामने उसके मायाजाल काम न आये। आखिर वे बुरी तरह से यौधेयों के हाथ हार गये। उनके दुर्ग श्रृग के हाथों में आ गये। विविध प्रकार के शिल्पियो को गुलाम बनाकर श्रृंग ने उनके द्वारा एक महा नगर बसाया। लूटी गयी उनकी संपत्ति के बल पर एक नया राज्य स्थापित किया।

बुद्धि-बल असाधारण थे। जब वह जवान ही था, तभी से यौधेय जाति के लोग उसकी हर बात को मानते, उसके आदेशों के अनुसार चल कर बहुत लाभान्वित हुए और उसको सब ने एकमत से अपना नेता बना लिया।

श्रृंग ने अपनी सारी शक्तियाँ लगाकर अपनी जाति के उद्धार का बीडा उठाया। यौधेयों के प्रदेश से थोडी दूर पर मायाव नामक जाति के लोग बसते थे। वे असंख्य प्रकार के मायाजाल जानते थे। उनके पास अपार संपत्ति थी। घर और महल बनाने की कला वे अच्छी तरह से जानते थे, मगर मायाव लोग शक्तिशाली न

तब तक जंगली जीवन बिताये गये यौधेयों को श्रृंग की कृपा से नागरिक जीवन बिताने का एक अच्छा अवसर प्राप्त हुआ। विविध प्रकार के पेशे और कलाएँ भी उन्हें प्राप्त हुईं। उन लोगों ने खेती करना, मवेशियों को पालना इत्यादि सीख लिया और सुखमय जीनव बिताना आरंभ किया। अब श्रृंग उनका राजा था।

लेकिन श्रृग ने अपनी जनता में एक कमी देखी। उसकी जाति ने नागरिक

जीवन बिताना तो सीख लिया, पर उनके विचार और विश्वास पहले ही जैसे असभ्य थे। उन्हें यह समझाने के लिए कि अंधविश्वासों के कारण उनकी बड़ी हानि होगी, शृग ने अपनी जाति के सभी लोगों को राजमहल के सामने स्थित विशाल मैदान में इकट्ठे होने का आदेश दिया। यौधय जाति के लोग शृग को भगवान का अवतार मानते थे, इसलिए उनका आदेश होते ही सब लोग राजमहल के सामने जमा हुए। उनके पीछे एक पहाड़ था और आगे राजमहल था।

शृग ने राजमहल की छत पर चढ़कर अपनी प्रजा को देखा। उसे देखते ही जनता ने जयकार किये। उसने सब को संबोधित करके पूछा–"मैं पहले तुम लोगों से एक बात पूछना चाहता हूँ। तुम लोग पहले की अपेक्षा ज्यादा सुखी, स्वस्थ और प्रसन्न हैं. इसका क्या कारण है? क्या तुम लोगो ने कभी इस बात पर विचार किया है?"

"यह सब देवताओ का अनुग्रह है!" जनता एक स्वर में बोली।

शृग ने नाक-भौं सिकोड़ कर कहा– "इसमें देवताओं का अनुग्रह क्या है?" इसके बाद उसने और क्या क्या कहा, किसी को सुनाई नहीं दिया। भयंकर बादलों के गर्जन जैसी ध्वनियाँ गूंज उठीं। पृथ्वी काँप कर फट गयी। उन फटासों से बिच्छू, साँप वगैरह बाहर आ गये। राजमहल के सामने स्थित पहाड गरज उठा। उसकी चोटी के पीछे से लाल-लाल लपटें उठीं, भयंकर काला धुआँ आसमान में ऊपर उठा और देखते-देखते प्रजा पर धूल जैसा भस्म गिरने लगा। शृग के धारण किये सुदर कपडे पल भर में काले वस्त्र जैसे हो गये।

जनता डरकर चारों तरफ़ अंधाधुंध भाग गयी। इस उपद्रव के साथ भीभत्स पैदा हो गया। भूकंप की वजह से नगर के अधिकांश घर गिर गये। कई लोग

उन घरों की छतों के नीचे दबकर मर गये। अग्निपर्वत के शांत होने के बाद चारों तरफ़ सिर्फ़ राख के ढ़ेर दिखाई दिये।

यौधेयों का विश्वास शृंग के प्रति उठ गया। वे सोचने लगे कि शृंग ने देवताओं की निंदा करके देवताओं के क्रोध को भड़काया और सब का सर्वनाश किया। इस कारण उसके प्रति उनका जो अगाध विश्वास था, एक दम उठ गया।

यह खबर उत्तरी दिशा में रहनेवाले यवन राजा रावल को मालूम हो गयी। वह अपनी सारी सेना को लेकर शृंग पर हमला करने आया।

शृंग ने अपनी प्रजा को युद्ध के लिए प्रेरित किया, मगर उन लोगों ने अपने राजा को देव-दूषक मानकर युद्ध करना अस्वीकार कर दिया। इस पर शृंग अपने शत्रु से बचकर सैंधव अश्व पर सवार हो अपने राज्य से भाग गया। इस वक़्त उसकी जाति के सभी लोग उसके शत्रु थे। मायाव, यवन और अन्य जंगली जातियों के हाथों में पड़ने से भागना हो तो उसे पूर्वी दिशा में ही भागना था। बड़ी मुश्किल से उसने रेगिस्तान पार किया। बीस दिन तक निरंतर चलकर असंख्य यातनाएँ झेलते आखिर इंद्रप्रस्थ नामक राज्य में पहुँचा।

शृंग ने इंद्रप्रस्थ में एक उद्यान को देखा। उस वक़्त उस उद्यान में राजकुमारी केशिनी विहार कर रही थी। इसलिए भटों ने शृंग को भीतर जाने नहीं दिया। इस कारण वह उद्यान के बाहर एक पेड़ के नीचे लेटकर सो गया।

थोड़ी देर बाद राजकुमारी की एक परिचारिका उद्यान के बाहर आयी, शृंग को देख उसके सौंदर्य पर मुग्ध हो गयी और उसने तत्काल जाकर यह समाचार राजकुमारी को दिया। राजकुमारी केशिनी ने उस युवक को अपने निकट बुला भेजा और उसकी हालत देख

फल और पेय मँगवाकर दिया। आहार ग्रहण करने के बाद शृंग थोड़ा स्वस्थ हुआ। केशिनी ने समझ लिया कि वह एक साधारण यात्री नहीं है। इसलिए पूछा–"आप कौन हैं? किस देश के निवासी हैं? यहाँ पर किस काम से आये हैं?"

केशिनी बड़ी सौंदर्यवती थी। उसे देखते ही शृंग भी उस पर मोहित हो गया; मगर वह उसके प्रति जो सहानुभूति और आदर दिखा रही थी, उसे देख वह बड़ी निराशा से बोला–"अब मैं कोई नहीं हूँ। अपना परिचय क्या दे सकता हूँ? मगर एक समय में शक्तिशाली और समर्थ था।"

केशिनी उस युवक को अपने साथ राजमहल में ले गयी और उसने अपने पिता के सामने उस युवक के साथ शादी करने की इच्छा प्रकट की।

"जिसके ठिकाने का कोई पता नहीं, उसके साथ तुम शादी कैसे करोगी? तुम शादी के लिए तैयार हो जाओ तो बड़े-बड़े राज्यों के राजकुमार तुम्हारे साथ शादी करने को तैयार बैठे हैं।" केशिनी के पिता ने समझाया।

केशनी ने एक और दफ़ा शृंग से पूछा–"मैं विश्वास करती हूँ कि तुम भी एक

राजकुमार हो! तुम अगर अपने बारे में साफ़-साफ़ बताओगे तो मेरे पिता हम दोनों का विवाह कर सकते हैं।"

शृंग ने घबड़ा कर कहा–"मेरी क़िस्मत फूटी है। मेरी हालत भी इस वक़्त अच्छी नहीं है।" इन शब्दों के साथ शृंग ने अपनी पूरी कहानी केशिनी को सुनाया।

केशिनी को जब यह मालूम हुआ कि वह यौधेय शृंग है, तब वह बहुत खुश हो गयी। थोड़े दिन पूर्व उसने शृंग के बारे में कई समाचार सुने थे। इसलिए उसने शृंग को समझाया–"तुम चिंता मत करो। हमारा विवाह हो जाएगा तो इंद्रप्रस्थ राज्य तुम्हारा ही होगा। तुम
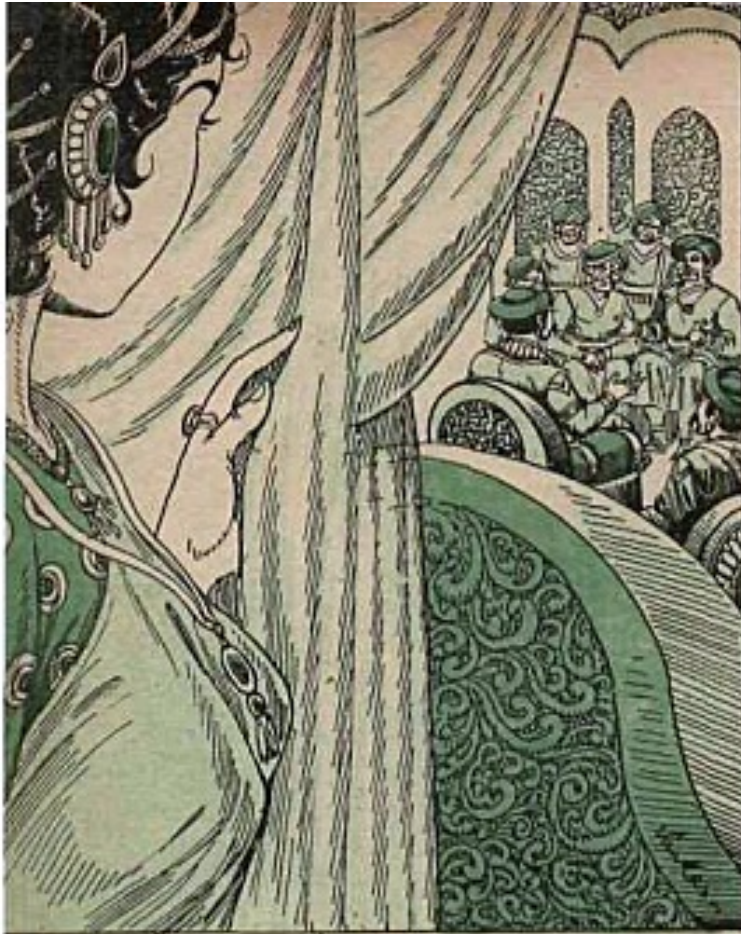
फिर से राजा बन सकते हो। समझ लो कि तुम्हारे बुरे दिन समाप्त हो गये हैं।"

केशिनी ने जाकर अपने पिता को शृंग का समचार सुनाया। मगर प्रसन्न होने के बाद विवाह के लिए स्वीकृति देने की बनिस्बत राजा परेशान हो उठा, पल भर सोचकर मंत्रियों को खबर भेजी कि वे सब मंत्रणा गृह में उपस्थित हो जाय।

केशिनी पहले ही गुप्त मंत्रणागृह में प्रवेश कर एक पर्दे के पीछे छिपी हुई थी और उसने पूरी चर्चा सुनी।

प्रारंभ में राजा ने अपने मंत्रियों को शृंग का सारा वृत्तांत सुनाकर कहा–"वह इस वक्त हमारे अतिथि बनकर रह रहा है।"

तुरत एक मंत्री ने कहा–"महाराज, रावल शक्तिशाली है। अगर हम शृंग को बंदी बनाकर उसके हाथ सौंप दे तो हम रावल के साथ शाश्वत मैत्री स्थापित कर सकते हैं।"

"अतिथि को शत्रु के हाथ सौंपना न्याय संगत नहीं है। उसे तुरत यहाँ से भेज देना उचित होगा। अगर रावल को मालूम हो जाय कि शृंग यहाँ पर है, तो वह हम पर हमला कर बैठ सकता है।" एक और मंत्री ने सुझाव दिया।

सभी मंत्रियों के सुझाव सुनने के बाद राजा ने कहा–"राजकुमारी शृंग के साथ विवाह करना चाहती है, वरना हमारे सामने कोई समस्या ही नहीं है।" राजा ने असली बात प्रकट की।

यह बात सुनते ही एक मंत्री ने सलाह दी–"महाराज, राजकुमारी की इच्छा की पूर्ति के लिए एक ही उपाय है। हम ही पड़ोसी राजाओं का सहयोग लेकर रावल पर चढ़ाई कर देंगे। उसकी वजह से कई देश अशांत हैं; उसे हराने का यश हमारे देश को प्राप्त होगा। इस से शृंग की समस्या भी हल हो जाएगी और राजकुमारी की इच्छा भी पूरी होगी।"

यह सलाह सब को पसंद आ गयी।

रावल का अंत करने के लिए कई छोटे मोटे देश आगे आये। एक बड़ी सेना तैयार हो गयी। उसमें शृंग एक सामान्य योद्धा के रूप में शामिल हुआ। उस युद्ध में यवन राजा राहुल का शृंग ने स्वयं सामना किया और उसमें वह बुरी तरह घायल हुआ; पर उसने राहुल का वध किया।

इसके बाद शृंग ने अपनी जाति के लोगों के बारे में दरियाफ़्त किया तो उसे मालूम हुआ कि वे लोग फिर से जंगली जीवन बिता रहे हैं। लेकिन उनमें से कुछ लोग यवनों के पास और कुछ लोग मायावों के पास गुलाम बनकर रहे हैं। उसने फिर से सभी जंगलियों को इकट्ठा किया, फिर एक महानगर बसाया, एक राज्य की स्थापना करके केशिनी के साथ विवाह किया।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा– "राजन्, देवताओं की निंदा करनेवाले शृंग के प्रति देवताओं ने फिर से क्यों अनुग्रह किया? उसे छोड़कर भागने वाले उसकी जाति के लोग फिर क्यों उसके आश्रय में आ गये? इस संदेह का समाधान जानते हुए भी न दोगे तो तुम्हारा सिर टुकड़े-टुकड़े हो जाएगा।"

इस पर विक्रमार्क ने यों जवाब दिया– "शृंग देवताओं की निंदा करनेवाला है। यह अंधविशस उसकी जाति के लोगों का है। ऐसे अंधविश्वासों से उन्हें मुक्त करने के लिए ही जब शृंग ने सब को एक जगह एकत्रित किया, तब संयोग से अग्निपर्वत फूट पड़ा। यौधेयों ने उसे देवताओं का प्रकोप समझा। मगर जब उसी शृंग ने अपनी शक्ति के बल पर विजय प्राप्त की, तब वे लोग यह सोचकर शृंगे के आश्रय में आ गये कि उस पर से देवताओं का क्रोध उठ गया है।"

राजा के इस तरह मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

पत्नी की सलाह

कोटिपल्ली के अग्रहार में एक पुरोहित रहा करता था। पुरोहिताई में वह बड़ा ही कुशल था, पर वह हद से ज्यादा लोभी था। अड़ोस-पड़ोस के गाँव वाले जब भी ज़रूरत पड़ती, उसी को बुलवा ले जाते। यजमान चाहे धनी हो या गरीब, पर पुरोहित सभी लोगों से एक ही प्रकार से धन वसूल करता था। सबको तंग करके गोदान भी करवा लेता था।

एक बार उस प्रदेश के कई गाँवों में भयंकर रूप से छुतहरी बीमारियाँ फैल गयीं और कई लोग मर गये। इससे क्या था, पुरोहित की पांचों उंगलियाँ घी में थीं। कर्मकाण्ड करने के लिए कोई दूसरा पुरोहित उस प्रदेश में कहीं न था। इसलिए सब कोई उसी को बुलवा ले जाते थे।

पुरोहित ने सब यजमानों से हठ किया कि कर्मकाण्ड करने के लिए गोदान अवश्य किया जाय। लोगों ने डरकर कि गोदान न देने से कर्मकाण्ड रुक जाएगा, सूखी या बांझ गाय का दान दे दिया। इस तरह बेकार की जो गायें मिलीं, उन सबको बड़ी मेहनत के साथ हांककर पुरोहित अपने घर ले आया।

कुछ ही दिनों में देखते-देखते पुरोहित के पास कई गायें जमा हो गयीं; लेकिन अब उसके सामने एक बड़ी समस्या पैदा हो गयी। इतनी सारी गायों को कैसे चरावे! उन्हें चारा कहाँ से लावे? पहले उन गायों को वर्षा में भीगने से बचाने के लिए एक झोंपड़ी बनानी पड़ी। इसके पीछे पुरोहित के द्वारा जमा किये गये धन में से बहुत बड़ा हिस्सा खर्च हो गया।

भारतभूषण सिंह

गायों के वास्ते चारा खरीदना चाहे तो बहुत से रुपये खर्च हो जाएँगे! चारा न दे तो गायें मर जाएँगी। तब उसके सर गोहत्या का पाप लगेगा। इसलिए पुरोहित खुद उन सभी गायों को चराने ले जाने लगा। इससे पुरोहिताई में बाधा पड़ी।

कुछ दिन बाद उसे लगा कि वह दोनों तरफ़ से लुट गया है। कई दिन तक चराने के बाद भी कोई गाय दूध न देती थी। सब या तो बांझ थीं, या सूख गयी थीं। इन बेकार की गायों के पीछे वह अच्छी आमदनीवाली पुरोहिताई को तिलांजली दे बैठा था। पुरोहिताई के बंद करते ही घर का खर्च चलाना मुश्किल हो गया। वह पुरोहिताई छोड़ मवेशी पाल बना, इससे सब तरह से उसका नुक़सान ही होने लगा। उधर परिवार चलाना भी मुश्किल होने लगा।

अगर किसी लड़के को गायें चराने के लिए नियत करना चाहे तो उसे तीनों जून भर पेट खाना खिलाना होगा। पुरोहित की पत्नी बीमार थी। उसने साफ़ कह दिया था कि वह नौकर को रसोई बनाकर खिला नहीं सकती। आखिर लाचार हो नौकर को भी वही पुरोहित रसोई बनाकर खिलाने लगा।

गायें दुधारू न थीं, इसलिए कड़ी मेहनत करने पर भी सब बेकार गयी। वह भगवान को कोसने लगा—"भगवान!

में आराम से पुरोहिताई करके अपने दिन काट देता था, तुमने कैसी तक़लीफ़ें मेरे सर मढ़ दीं?" उसने यह समझने का कभी प्रयत्न नहीं किया कि उसका पुलोभन ही उसकी तक़्लीफ़ों की जड़ है और उसने यह तक़्लीफ़ जान बूझकर अपने सर मोल ली हैं।

आखिर पुरोहित की सारी तक़लीफ़ों को उसकी पत्नी ने ही दूर किया। वह बड़ी बुद्धिमती थी। इंधर कुछ महीनों से वह अपने पति की यातनाओ से परिचित हो गयी थी।

"आप इस तरह चिंता करते बैठे रहेंगे तो कोई फ़ायदा न होगा। हमें इस विपत्ति से बचने का कोई उपाय सोचना चाहिए। मैं एक उपाय बता देती हूँ, ऐसा कीजिए। आप की सारी तक़लीफ़ें दूर हो जाएँगी।" पुरोहिताइन ने समझाया।

"बताओ, ऐसा ही करेंगे।" पुरोहित ने पूछा।

"सुनिये; इन बेकार गायों को जो भी दाम मिले, बेच डालिये। उन रुपयों से अच्छा दूध देनेवाली दो गायों को ख़रीद लीजिए। अगर कोई गोदान करना चाहे तो वे लोग गाय ख़रीदने के लिए जितने रुपये खर्च करना चाहते हैं, वे रुपये आप ही लेकर उनसे बताइये कि गाय ख़रीदकर ले आयेंगे। तब हमारी गायों में से एक को ले जाकर तीन दिन पहले उन यजमानों के घर बाँध दीजिए। फिर उसी को दान में लेकर घर ले आइए। इससे गायों को बेचने पर हमें काफ़ी रुपये मिल जाएँगे, और घर में दुधारू गायें भी होंगी, तब उनके चारे और चराने की बातें तो कोई समस्या भी न होंगी।" पुरोहिताइन ने समझाया।

ये बातें सुनते ही मानों पुरोहित की जान में जान आ गयी। उसने बेकार की गायों को किसी कसाई के हाथ बेच दिया। इसके बाद अपनी पत्नी के कहे मुताबिक़ दो दुधारू गायें ख़रीद लीं, उनसे ख़ूब धन कमाते, पुरोहिताई भी करते, आराम से अपने शेष दिन बिताने लगा।

भगवान से बड़ा मानव

रत्नाकर देश पर मणिकंठ राजा शासन करता था। उसकी कुशलता के कारण उसका राज्य चारों तरफ़ खूब फैल गया। इस वजह से कोने में रहनेवाले लोगों के सुख-दुखों का पता लगाना राजा के लिए मुश्किल मालूम हुआ। इस समस्या के बारे में राजा मणिकंठ ने अपने मंत्रियो की सलाह माँगी। इस पर मंत्रियों ने सलाह दी कि देश को चार प्रमुख भागों में बाँटा जाय और प्रत्येक भाग पर एक योग्य प्रतिनिधि को नियुक्त किया जाय।

राजा ने अपने राज्य को चार भागों में बाँट दिया और प्रत्येक भाग पर एक एक विश्वास पात्र प्रतिनिधि को नियुक्त किया।

चारों राज प्रतिनिधि प्रति मास अपने अपने प्रदेश की प्रजा की असुविधाओं का उल्लेख करते हुए उन्हें दूर करने के लिए लिये जानेवाले निर्णयों का ब्यौरा राजा की सेवा में भेजा करते थे।

इस बात में कोई संदेह न था कि राज प्रतिनिधि राजा के प्रति श्रद्धा और भक्ति रखते हैं। लेकिन इसी कारण से थोड़ी उलझनें पैदा हो गयी। उनमें इस बात की स्पर्धा बढ़ गयी कि अपने अपने प्रदेश को शेष तीनो प्रांतों से समृद्ध बनाया जाय! जनता में उत्साह पैदा करने के लिए उन प्रतिनिधियो ने प्रांतीय तत्वों को उभाड़ दिया। राज्य भर के सभी लोग एक जाति के न थे। गणराज्य होने के कारण एक जाति के लोग दूसरी जाति के लोगों के साथ हर छोटी-सी बात को लेकर झगड़ा करते थे। मगर सभी प्रदेश एक ही शासन के अंतर्गत आ जाने के कारण जाति-वैषम्य एक प्रकार से दब गये थे। मगर इन नये राज प्रतिनिधियों ने आपस

राजेश तिवारी

में स्पर्धा करके जाति-वैषम्य पैदा होने का मौक़ा दिया।

अलावा इसके जिस प्रांत में जो पैदावर होती थी, उसे दूसरे प्रांत में जाने से राज प्रतिनिधियों ने रोक दिया। राज्य की उत्तरी दिशा में कपास ज्यादा पैदा होता था, मगर बुनाई में दक्षता रखने वाली जातियाँ दक्षिणी दिशा में फैली थीं। जब राज्य एक इकाई के रूप में था, तब उत्तरी दिशा का कपास दक्षिण के बुनकरों को आसानी से प्राप्त हो जाता था। मगर अब उत्तर के राजप्रतिनिधि ने अपने प्रांत में पैदा होनेवाले कपास को दक्षिण में जाने से रोका और अपने ही प्रदेश के लोगों को बुनाई सीखने पर ज़ोर दिया। ऐसी हालत में दक्षिण के प्रतिनिधि ने अन्य पैदावर ठीक से उपजने वाले खेतों में कपास पैदा करने का आदेश दिया। इस वजह से जहाँ अच्छे बुनकर थे, वहाँ अच्छे क़िस्म का कपास पैदा नहीं हुआ और जहाँ अच्छे क़िस्म का कपास पैदा होता था, वहाँ अच्छे बुनकर नहीं रहें, परिणाम स्वरूप वस्त्रों का स्तर बिलकुल गिर गया।

यही हालत लोहे के उद्योगों की भी हो गयी। देश की पूर्वी दिशा में बढ़िया लोहे की खानें थीं। पर पश्चिमी दिशा में कुशल लोहकार कारीगर थे। पूर्वी दिशा के राज प्रतिनिधि ने अपने यहाँ के लोहे को पश्चिम में भेजने पर प्रतिबंध लगाया और अपने ही प्रदेश में लोहे के कारीगरों को शिक्षण देना प्रारंभ किया। इस कारण पश्चिम के राज प्रतिनिधि ने लाचार होकर पड़ोसी देशों से अधिक दाम देकर लोहा खरीदना शुरू किया।

केन्द्र में रहनेवाले राजा के पास राज प्रतिनिधियों से जो रिपोर्ट मिलती थीं, उन्हें देखने पर राजा को लगता कि उनके प्रतिनिधि यथा शक्ति देश की उन्नति के लिए श्रम उठा रहे हैं। मगर राजा जानता था कि देश का विकास नहीं

हो रहा है। परंतु कमी कहाँ थी, यह बात राजा की समझ में न आती थी।

राज प्रतिनिधियों को नियुक्त करके पांच साल बीत गये थे। पर देश पहले की तरह तरक़्क़ी नहीं कर पाया, उल्टे पहले की तरक़्क़ी रुक गयी है और देश में एक प्रकार से स्तब्धता छा गयी है।

इसका कारण जानने के लिए राजा ने राजधानी में विभिन्न प्रकार की गोष्ठियों का इंतज़ाम किया। एक गोष्ठी में भाषण देते हुए सभी व्यापारियों ने बताया कि गत पांच सालों के भीतर व्यापार में खूब विकास हो गया है। इसी प्रकार उद्योग पतियों ने बताया कि उद्योगों की उन्नति पहले की अपेक्षा कहीं अधिक हुई है। ये सारे भाषण सुनने के बाद राजा की समझ में न आया कि इस उन्नति को देख उसे खुश होना है या देश में विकास न होने पर चिंता करनी है।

अंत में एक दिन पंडितों की गोष्ठी हुई। उस गोष्ठी में शशिभूषण नामक पंडित ने अपनी असाधारण प्रतिभा का परिचय देकर राजा से पुरस्कार भी प्राप्त कर लिया।

पुरस्कार प्रदान करते राजा ने शशिभूषण से पूछा–"पंडित जी, मैं आपसे पांडित्य संबंधी प्रश्न नहीं पूछूंगा, मगर बहुत समय से एक समस्या मेरे मन को व्याकुल बना रही है, क्या आप उसका समाधान दे सकेंगे?"

"पूछिये, महाराज! मैं यथा शक्ति उत्तर देने का प्रयत्न करूँगा।" शशिभूषण ने जवाब दिया।

"इस संसार की सृष्टि भगवान ने की है, इसलिए हम भगवान को सब से बड़ा मानते हैं। मगर क्या भगवान से भी कोई बड़ा आदमी है?" राजा ने पूछा।

"क्यों नहीं है, महाराज? भगवान से भी बड़ा व्यक्ति मानव है!" शशिभूषण ने झट जवाब दिया। राजा ने विस्मय में आकर कहा–"जवाब देने मात्र से आपकी

जिम्मेदारी पूरी नहीं हो जाती, उसे साबित भी करना होगा।"

शशिभूषण ने विनम्रपूर्वक कहा–"मैंने अपने अनुभव के आधार पर यह उत्तर दिया है। महाराज, भगवान ने मेरे ललाट पर पांडित्य का संपादन करने को लिखा था। उसके आधार पर मैं उत्तर प्रदेश में शिक्षक के रूप में युवकों को शिक्षा दे रहा था। मगर मैं पूर्वी प्रदेश का निवासी था, इस कारण मुझे अपनी नौकरी से हाथ धोना पड़ा। इसलिए मैंने जो शिक्षा प्राप्त की थी, उसे युवकों में बांटने के काम को तिलांजली दी और फिलहाल मैं खेती करके जीविका चला रहा हूँ। भगवान ने मेरे ललाट पर जो भाग्य रेखाएँ खींच दी थीं, उन्हें मानव ने मिटा दिया। अब आप ही बताइये कि इन दोनों में से कौन बड़ा है?"

शशिभूषण की बातें सुनने पर राजा की आंखें खुल गयीं। जो राज्य एक इकाई के रूप में रहना चाहिए था, वह चार छोटे राज्यों में बंट गया है। इस समस्या पर राजा ने फिर से मंत्रियों के साथ चर्चा की। मंत्रियों ने गंभीरतापूर्वक विचार करके यों सुझाव दिये–"महाराज, बडे राज्य को छोटे खण्डों में विभाजित करने मे कोई गलती नहीं है। प्रांतीय भावनाओं के बढ़ने का कारण जिस प्रांत का प्रतिनिधि उसी प्रांत के निवासी का होना है। हम यह भी नहीं कह सकते कि हमारे राज प्रतिनिधि दुष्ट और असमर्थ हैं। मगर एक प्रांत के व्यक्ति को दूसरे प्रांत का राज प्रतिनिधि नियुक्त किये होते तो यह बुरी हालत न हुई होती। इसलिए उनका स्थान-परिवर्तन करवा दीजिए। यह समस्या अपने आप सुलझ जाएगी। तब जनता अपने को एक ही देश का नागरिक मान कर चलेगी। इससे विविध प्रांतो के बीच की यह स्पर्धा मिट जाएगी और उनके बीच सहयोग और सहकार की भावना बढ़ेगी।"

राजा ने इन सुझावों को अमल किया और देश की उन्नति का रास्ता खोल दिया।

सात घड़े

एक गाँव में एक छोटा व्यापारी था। उसके मन में बड़ा व्यापारी बनने की तीव्र अभिलाषा थी। लेकिन वह यह कला बिलकुल नहीं जानता था कि सब व्यापारियों से अधिक धन कैसे कमाया जाय!

एक दिन वह माल खरीदने शहर की ओर जा रहा था। धूप अधिक थी, इसलिए रास्ते में एक पेड़ की छाया में बैठकर धन कमाने के बारे में सोचने लगा।

इतने में ऊपर से उसे यह सवाल सुनाई दिया—"क्या तुम्हें सात घड़ों का सोना चाहिए?"

व्यापारी ने अचरज में आकर अपना सिर उठाकर ऊपर देखा। मगर उसे कोई दिखाई नहीं दिया। फिर भी वह प्रसन्नता के साथ ऊपर देखते बोला—"महाशय, मैं नहीं जानता कि आप कौन हैं? मुझ पर दया करके यदि आप मेरा उपकार करना चाहें तो मैं उसे स्वीकार करने से कैसे इनकार कर सकता हूँ? सात घड़ों का सोना ज़रूर दिला दीजिए।"

इसके उत्तर के रूप में पेड़ पर से ये बातें सुनाई दीं—"घर जाकर देख लो, सात घड़ों का सोना तुम्हारे घर में होगा।"

व्यापारी झट उठ बैठा और दौड़ते अपने घर पहुँचा। उसके घर में सचमुच सात घड़ों में सोना था, मगर छे घड़ों में सोना भरा पड़ा था, किंतु सातवें घड़े में आधा ही भरा था। व्यापारी यह सोचकर खुश नहीं हुआ कि छे घड़ों में सोना भरा हुआ है, पर वह इस बात की चिंता करने लगा कि सातवें घड़े में आधा ही सोना है। उसे लगा कि सातवें घड़े को भी सोना से भर दे, तभी जाकर उसकी चिंता दूर हो जाएगी।

संजीव सहाय

उसने उसी वक़्त अपनी पत्नी के बदन से सारे गहने उतरवाकर घड़े में डाल दिया। मगर तब भी घड़ा भरा न था।

उसी गाँव में एक ज़मीन्दार था। वह व्यापारी के बचपन का मित्र था। इसलिए व्यापारी ने ज़मीन्दार के घर जाकर कहा—"मैं खतरे में फंसा हुआ हूँ। मुझे कर्ज दे दो।" यों कहकर उसने ज़मीन्दार से काफ़ी रुपये लिये और उन रुपयों से सोना खरीद कर घड़े में डाल दिया। फिर भी घड़ा नहीं भरा।

इसके बाद व्यापारी ने कांजी पीना तक बंद किया और फटे-पुराने कपड़े पहनकर भीख मांगने चल पड़ा।

एक दिन भीख मांगते वह ज़मीन्दार को दिखाई दिया। वह फटे-पुराने कपड़े पहने सूखकर कांटा हो गया था। इस हालत में व्यापारी को देख ज़मीन्दार आश्चर्य में आ गया। उसकी समझ में न आया कि थोड़ी-बहुत ज़मीन-जायदाद के होते हुए भी व्यापारी क्यों भीख मांग रहा है? उसने व्यापारी को निकट बुलाकर पूछा—"अबे, तुमने कहीं मूर्खता में आकर सात घड़े नहीं लिये हो न?"

व्यापारी ने विस्मय में आकर ज़मीन्दार से पूछा—"भाई साहब! यह बात तुम्हें कैसे मालूम हो गयी?"

"यह कोई बड़ी रहस्य की बात नहीं है। मैंने सात घड़े लेनेवाले कई लोगों को देखा है। उन में से एक भी नहीं सुधरा। जल्दी तुम उन से पिंड छुड़ा लो।" ज़मीन्दार ने सलाह दी।

व्यापारी उसी वक़्त उस पेड़ के नीचे गया और चिल्लाकर बोला—"भागवन, मुझे ये सात घड़े नहीं चाहिए। तुम्हीं वापस ले लो।"

इसके बाद व्यापारी ने घर लौटकर देखा, सात घड़े न थे। उनके साथ ही साथ व्यापारी ने सातवें घड़े में अपना जो सोना डाल दिया था, वह भी गायब हो गया था। लोभ की वजह से वह अपना सब-कुछ खो बैठा।

आचार्य पीठ!

एक जमाने में काशी विद्यापीठ सारे देश में सर्वश्रेष्ठ विद्यापीठ माना जाता था। राजा माधववर्मा के समय में निगमशर्मा नामक महा पंडित उस विद्यापीठ के अधिपति थे। वे समस्त शास्त्रों में पारंगत विद्वान थे, फिर भी घमण्ड उनको छू तक न गया था। अपने पास आये हुए सभी विद्यार्थियों को वे शिक्षा देते थे।

उनके पास विद्याभ्यास के लिए आये हुए शिष्यों में राजशेखर एक था। वह बड़ा ही बुद्धिमान था। मगर जब से वह गुरुकुल में आया, तब से उसकी दृष्टि आचार्य पीठ पर केन्द्रित थी। वह अपने सहपाठियों के साथ मिलकर घूमता न था, उन लोगों से बात भी कम करता था। सदा वह किसी चिंता में डूबा रहता था। फिर भी अध्ययन में वह सब से आगे था।

ज्यों ज्यों राजशेखर का विद्याभ्यास पूरा होने को था, त्यों त्यों आचार्य पीठ के प्रति उसकी इच्छा तीव्र होती गयी। उसने अपने मन में यह दृढ़ निश्चय कर लिया कि किसी भी तरह से सही, अपने आचार्य के स्थान को उसे प्राप्त कर लेना चाहिए।

अपना विद्याभ्यास पूरा होते ही सभी शिष्य अपने अपने घर चले गये। किंतु राजशेखर अपने घर नहीं गया, बल्कि वह देशाटन पर चल पड़ा। उसका उद्देश्य था कि विविध देशों का भ्रमण करके अगर उसे कुछ सीखने में बाक़ी रह गया हो तो उसे पूरा कर लेना है।

जब उसे यह विश्वास हो गया कि अपने इस उद्देश्य की भी पूर्ति हो गयी है, तब राजशेखर अनेक दरबारों में गया, वहाँ के पंडितों से चर्चा करके इस निर्णय

महेश गनाला
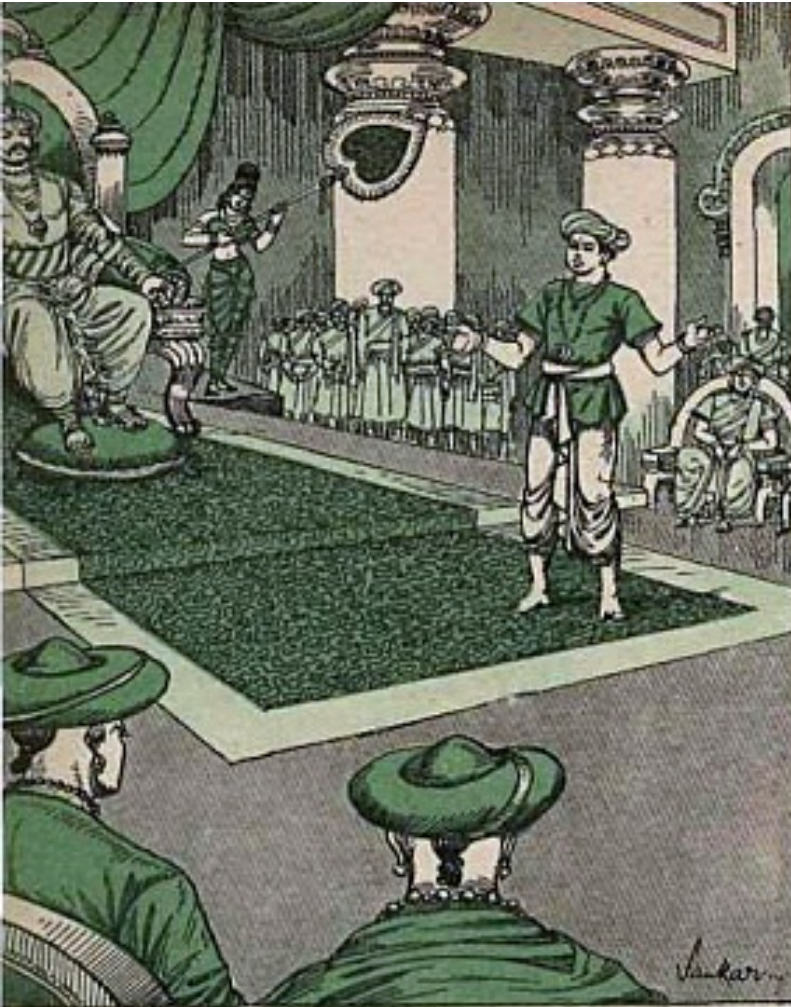
पर पहुँचा कि वे सभी पंडित उससे ज्यादा विद्वान नहीं हैं।

इसके बाद वह काशी राज्य को लौट आया, माधववर्मा के दरबार में प्रवेश कर बोला–"महाराज, मैं समस्त शास्त्रों का ज्ञान प्राप्त कर चुका हूँ। अनेक देश घूम कर वहाँ के पंडितों से मैंने चर्चाएँ भी की हैं। मगर मुझे कहीं भी मुझ से बड़ा विद्वान कोई दिखाई नहीं दिया। अब मैं यह जानने के लिए आया हूँ कि ऐसे पंडित कोई क्या आपके दरबार में हैं?"

राजा ने अपने दरबार के पंडितों के साथ राजशेखर को चर्चा करने की अनुमति दी। यह मौक़ा पाकर राजशेखर ने सभी पंडितों से चर्चा करके यह साबित किया कि वह सब से श्रेष्ठ विद्वान है, फिर क्या था, इससे उसका अहंकार और बढ़ गया।

तब उसने राजा माधववर्मा से पूछा–"महाराज, मैंने अपनी श्रेष्ठता साबित की है। इसलिए मुझे काशी विद्यापीठ का आचार्य-पद दिलवा दीजिए।"

राजा ने पंडित निगमशर्मा को बुला भेजा और राजशेखर की इच्छा बतायी। निगमशर्मा ने राजशेखर से कहा–"बेटा, सुनते हैं कि तुमने सभी दरबारी पंडितों को हरा कर आचार्य पीठ की कामना की है, यह मेरे लिए प्रसन्नता की बात है। मगर उस आचार्य पीठ और तुम्हारे बीच मैं एक व्यवधान बन गया हूँ। इसलिए तुम शास्त्रार्थ के द्वारा मुझे भी पराजित करके आचार्य पीठ पर अधिकार कर लो।"

दूसरे दिन निगमशर्मा तथा राजशेखर के बीच प्रतियोगिता हुई। तर्क में पहले ऐसे लगा कि राजशेखर का हाथ ऊँचा है, मगर धीरे-धीरे उसका उत्साह मंद होता गया। अंत में निगमशर्मा के कई सवालों का राजशेखर जवाब न दे पाया। दरबारियों ने अपना हर्ष प्रकट करते हुए निगमशर्मा की प्रशंसा की।

कल इसी दरबार में विजय गर्व से राजशेखर फूला न समाया था, पर आज निगमशर्मा के हाथों मे उसका घोर पराभव हुआ। वह झठ उठकर दरबार से चला गया।

वह सीधे हिमालयों में गया। दो वर्ष तक उसन सरस्वती के प्रति कठिन तपस्या की। सरस्वती देवी ने प्रत्यक्ष होकर उसे संपूर्ण ज्ञान प्रदान किया।

फिर क्या था, राजशेखर में एक विचित्र परिवर्तन हुआ। वह उसी वक़्त रवाना होकर काशी राज्य को लौट आया। सीधे वह विद्यापीठ में गया, निगमशर्मा के पैरों पर गिर कर प्रार्थना की—"आचार्यजी, अज्ञान के कारण मुझमें जो अहंकार आ गया था, उसे कृपया आप क्षमा करें। अब मैं समझ गया हूँ कि सच्चा ज्ञान और विद्वत्ता क्या है?"

निगमशर्मा ने अपने हाथों का सहारा दे उसे ऊपर उठा कर समझाया—"बेटा राजशेखर, तुमने विद्यार्थी दशा में ही अध्ययन की अपेक्षा आचार्यपीठ पर अपना ध्यान अधिक केन्द्रित किया, यह बात मैं जानता था। सब विद्यार्थियों से बढ़ कर अक़्लमंदी रखते हुए भी तुम संपूर्ण ज्ञान प्राप्त नहीं कर सके, इसका यही कारण है। अहंकार भी अज्ञान के कारण ही पैदा होता है। तुम्हारे अहंकार के नष्ट होते देख मुझे लगता है कि तुम्हारा ज्ञान पूर्ण हो गया है। इसीलिए तुम्हें विनय प्राप्त हो गयी है।"

दूसरे दिन निगमशर्मा राजशेखर को साथ ले राजा माधववर्मा के दरबार में गये और राजशेखर की सिफ़ारिश करते कहा—"महाराज, यही राजशेखर काशी विद्यापीठ का नया आचार्य है। यह युवक है और ज्ञान में मुझसे बड़ा है। मैं वृद्ध हो चुका हूँ। इसलिए वानप्रस्थ में जाना चाहता हूँ।"

इस पर राजा ने प्रसन्न हो राजशेखर को काशी विद्यापीठ का आचार्य नियुक्त किया।

चतुर सोमनाथ

सप्तगढ़ का राजकुमार स्वर्णकुमार एक बार उद्यान में टहल रहा था, तब भौंरे ने उसे काट खाया। राजदंपति के बहुत साल तक कोई संतान न हुई, आखिर बुढ़ापे में स्वर्णकुमार पैदा हो गया था, इसलिए वे बड़े ही लाड़-प्यार से राजकुमार की देखभाल करते थे। उस वक्त राजकुमर की उम्र आठ साल की थी। पल-भर के लिए वह राजा-रानी की आँखों से ओझल हो जाता, वे दोनों तड़प उठते थे। स्वर्णकुमार उस दिन अपने माता-पिता के साथ उद्यान में टहल रहा था। तभी काले भौंरे ने उसे काट खाया। वह पीड़ा के मारे रोने लगा। नौकर तुरंत राजकुमार को राजमहल में ले गये और दरबारी वैद्य के द्वारा उसका इलाज कराया। थोड़ी देर बाद राजकुमार को आराम मिला। उस रात को रानी ने एक सपना देखा। सपने में एक देवता ने दर्शन देकर रानी से कहा–"रानी, तुम अपने पुत्र के बारे में सावधान रहो। उसे जिस भ्रमर ने काट खाया, वह मामूली भ्रमर नहीं है, बल्कि वह एक शपित राक्षसी है। उसकी डंक ऐसी भयंकर है, जिससे राजकुमार धीरे-धीरे कमजोर होता जाएगा। रोज एक तोले का वजन घटते-घटते आखिर वह कंकाल जैसा हो जाएगा। तुम चाहे तो एक अच्छे तराज़ू पर अपने पुत्र का वजन तौलकर रोज़ देखती जाओ। तब जाकर सचाई का तुम्हें पता लग जाएगा।"

"महात्मन, इसकी दवा क्या है?" रानी ने पूछा।

मगर देवता इस सवाल का जावब दिये बिना ही गायब हो गया। रानी चौंककर उठ बैठी। उसने उसी वक़्त राजा को जगा कर अपने सपने का समाचार सुनाया।

ए. सी. सरकार. जादूगर

"तुम इसे सच मत मानो। सपने तो सपने ही हुआ करते हैं। क्या सपनों के सच होते हुए किसीने देखा भी है?" राजा ने समझाया।

रानी अपने मन की शांति खो बैठी। दूसरे दिन सवेरे रानी ने अपने पुत्र को तौलवाया। फिर दो दिन बाद तौलवाकर देखा तो पता चला कि राजकुमार का बज़न तीन तोले घट गया है। उस दिन से राजकुमार रोज एक तोले के हिसाब से कमज़ोर होता गया। सपने की बात सच निकली।

यह खबर पाते ही राज परिवार, राज कर्मचारी और नागरिक भी चिंता में डूब गये। स्वर्णकुमार की अनेक प्रकार से चिकित्सा करायी गयी। कई व्रत, जप, पूजा व प्रार्थनाएँ करायी गयीं, मगर राजकुमार की हालत में कोई सुधार दिखाई न दिया, वह दिन प्रति दिन बराबर कमज़ोर होता ही गया।

उस देश के मध्य भाग में एक घने जंगल में चण्डपाणी नामक एक मांत्रिक रहा करता था। वह भूत-पिशाचों को भगाने में प्रवीण था। एक बार राजा के दूतों ने चण्डपाणी के पास जाकर बताया कि वह एक बार राजमहल में आवे और राजकुमार का इलाज करे। उसे राजमहल में बुलवाने के लिए ज़रूरी इंतज़ाम किये गये।
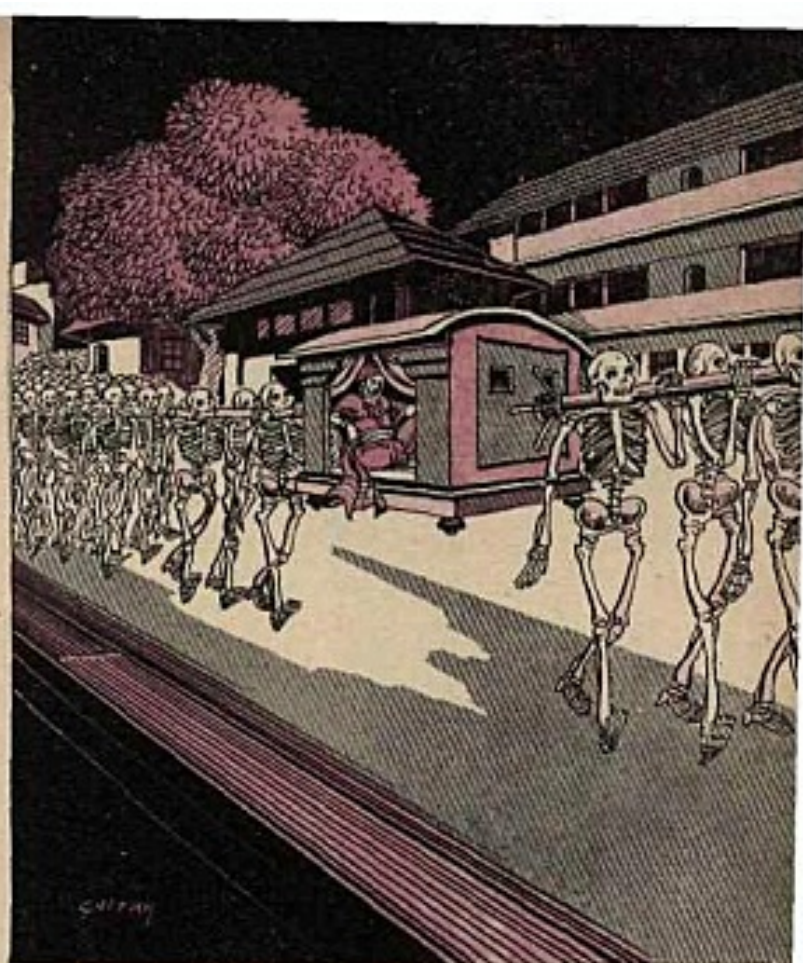
चण्डपाणी ने कहला भेजा कि वह शनिवार आधी रात को आयेगा, तब तक एक हज़ार लोगों के लिए मिष्टान्नों से भरी दावत का इंतज़ाम करे। साथ ही नगर की प्रजा उस वक़्त घर से बाहर न निकले और नगर में कहीं दीपक न जले।

नियत समय पर चण्डपाणी एक पालकी में आ पहुँचा। उस पालकी को छे कंकाल ढोकर राजमहल में ले आये। पालकी के पीछे सैकड़ों कंकाल पैदल चल कर आये। राजमहल के अहाते में एक हज़ार कंकाल ने दावत खाकर सवेरे तक ख़ुशी के साथ

नाच-गाने किये और खाली पालकी के साथ वापस लौट गये।

इसके बाद चण्डपाणी ने राजमहल में प्रवेश करके कहा–"राजा कहाँ पर हैं? मैं आ गया हूँ, बाहर आकर मेरा स्वागत करने को कहिए।"

राजा ने अपने परिवार के साथ आगे बढ़कर कहा–"म आप ही के इंतज़ार में बैठा हूँ। महात्मन, भीतर पधारिये।"

"तुम्हारा पुत्र कहाँ? पहले मुझे उसे देखना है?" चण्डपाणी ने राजा से कहा।

चण्डपाणी को राजकुमार के कमरे में ले गये। चण्डपाणी ने वहाँ की हवा सूंघ कर कहा–"हाँ, मैंने पहिले ही सोचा था। उस पिशाचिनी ने राजकुमार में प्रवेश किया है। मैं उसे नहीं छोड़ूंगा। मारण होम करूँगा।" फिर राजा की ओर मुड़कर बोला–"उस दुष्ट पिशाचिनी की कहानी आप सबको सुननी है। मैं बता देता हूँ, सुन लीजिये।"

चण्डपाणी यों कहने लगा–"प्राचीन काल में सिद्धवन में एक राक्षसी रहती थी। उसके हीति नामक एक लड़की थी। उस वक्त मैं उस जंगल में समाधि में था। तब हीति ने आकर मेरी समाधि को भंग करना चाहा। मैंने बार-बार उसे चेतावनी दी, फिर भी इसकी परवाह किये बिना वह मेरी निष्ठा को भंग करती गयी। आखिर मैंने उसे शाप देकर मानव सिर वाली भैंस के रूप में बदल दिया। तब भी मुझे छेड़ना उसने बंद नहीं किया। इस पर मैंने और गुस्से में आकर उसे काले भ्रमर के रूप में बदल दिया और इस देश में भगाया। उसकी दुष्ट बुद्धि नहीं गयी। उसने राजकुमार को डंक मारा, मगर उसने बहुत समय तक यह सज़ा भोगी। अब उसे यह चेतावनी दे शाप से मुक्त करना है कि आइंदा वह किसी के प्रति कोई अपकार न करे। मैं उसे बुलाकर पूछूंगा कि राजकुमार की बीमारी के लिए कोई दवा है कि नहीं।"

यों कहकर चण्डपाणी ने आग सुलगा ली। उसमें सुगंध द्रव्य डाल दिये। आग में से धुआँ ऊपर उठा। चण्डपानी ने कोई मंत्र पढ़ा, तब वह धुआँ एक जगह इकट्ठा हो एक स्तम्भ के आकार को प्राप्त हुआ। एक काला भ्रमर उसके भीतर उड़ता आया।

चण्डपाणी ने उससे पूछा–"अरी दुष्टे, तुम अब तक अपनी दुर्बुद्धि को छोड़ न पायी। इस राजकुमार को तुमने डंक मारा है?"

भ्रमर ने मनुष्य की बोली में कहा–"महात्मा, क्षमा कीजिये। मैंने आपको यहाँ पर बुला भेजने के लिए राजकुमार को डंक मारा है। आप आ ही गये, इसलिए मैं राजकुमार का इलाज बता देती हूँ। अग्नि गुल्म का रस रोज लोटा-भर राजकुमार को पिला दे तो वह स्वस्थ हो जाएगा। महात्मा, राजकुमार की बीमारी के स्वस्थ होते ही मुझे अपना पूर्व रूप दिलवा दीजिए।"

"ऐसा ही करूँगा। राजकुमार के पूर्ण स्वस्थ हो जाने पर तुम शाप से मुक्त हो जाओगी।" चण्डपानी ने बताया। इसके बाद भ्रमर चण्डपाणी के पैरों पर बैठा और झंकार करते कहीं उड़ गया।

चण्डपाणी ने दरबारी वैद्य को बुलवा कर पूछा–"तुम अग्नि गुंल्म को जानते हो न?"

"महात्मा, जानता हूँ। वह हमारी जड़ी-बूड़ीवाले क्षेत्र में पर्याप्त मात्रा में उगता है।" वैद्य ने जवाब दिया।

"अच्छी बात है। तब तो भ्रमर के कहे मुताबिक़ राजकुमार का इलाज कराओ। मैं आशीर्वाद देता हूँ कि वह शीघ्र पूर्ण स्वस्थ हो जाए। अब मुझे तंग न कीजिए।" यों कहकर चण्डपाणी सबके देखते अंतर्धान हो गया।

अग्नि गुल्म लाकर उसका रस निछोड़ा गया। कांच के लोटे में डाल कर राजकुमार को पिलाने के लिए वैद्य उसके कमरे में गया। उसने वह लोटा राजकुमार के सामने रख कर कहा–"राजकुमार, यह दवा पी लो। तुम्हारी बीमारी अच्छी हो जाएगी।"

लोटे का रस काली स्याही जैसा था। उसे देख राजकुमार ने नाक-भौं सिकोड़ कर कहा–"छी, छी, इसे बाहर ले जाइये। इसे मैं नहीं पिऊँगा; फिर कभी इसे मेरे पास न लाइए।"

राजकुमार पहले से ही काले रंग से घृणा करता था। राजा और रानी ने राजकुमार को अनेक प्रकार से समझाया। मगर उसने नहीं माना। किसीकी समझ में न आया कि राजकुमार से वह दवा कैसे पिलायी जाय। उसमें अगर कोई चीज़ मिला कर रंग बदल दे तो शायद दवा का गुण बदल सकता है। इस बात का डर सब को सताने लगा।

इस प्रकार दो दिन बीत गये। राजकुमार का वजन दो और तोले घट गया। राजदरबार में इस बात को लेकर दो दिन तक चर्चा चली। तीसरे दिन की चर्चा में दरबारी जादूगर सोमनाथ ने कहा–"महाराज, मुझे एक मौक़ा दीजिए।"

"क्या तुम्हारा जादू काम देगा?" राजा ने पूछा।

"महाराज, आखिर प्रयत्न करने में नुक़सान ही क्या है?" सोमनाथ ने कहा।

"अच्छी बात है। कोशिश करके देखो। तुम्हारी कोशिश अगर सफल हुई तो तुम्हें अच्छा पुरस्कार दिया जाएगा।" राजा ने कहा।

"मैं अभी अपनी कोशिश शुरू कर देता हूँ।" सोमनाथ ने उत्तर दिया।

स्वर्णकुमार सोमनाथ को बहुत चाहता था। क्योंकि वह अद्‌भुत जादू की विद्याएँ दिखाया करता था। मगर सोमनाथ को भी कांच के लोटे में काला रस डाल कर आते देख स्वर्णकुमार बोला—"सोमनाथ, क्या तुम भी वह कमबख्त दवा ले आये हो? तुम्हारा पुण्य होगा। तुम उसे बाहर फेंक दो। इससे अच्छा यह होगा कि तुम कोई जादू करके दिखाओ।"

"राजकुमार, तुम भूल कर रहे हो। मैं सबकी तरह तुम्हें थोड़े ही तंग करूँगा? मैं यहाँ जादू करने के लिए ही आया हूँ।" सोमनाथ ने समझाया।

"यह झूठ है! तुम सब कोई कुतंत्र करके मुझसे यह काली स्याही पिलाना चाहते हो?" यों कहते राजकुमार रोने लगा।

"फिर तुम भूल कर रहे हो। तुम जिसे स्याही बताते हो, वह स्याही नहीं। यह बात मैं तुम्हें अभी दिखा देता हूँ। तुम इस लोटे की ओर देखो।" यों कहते सोमनाथ ने लोटे को ऊँचा करके जेब में से एक काला रूमाल निकाला, उसे लोटे पर ढक दिया। कोई मंत्र पढ़ते लोटे को

सब ओर से पोंछ दिया। इस तरह थोड़ी देर तक करने के बाद उसने जेब रूमाल निकाला। राजकुमार ने आँखें विस्फारित करके आश्चर्य के साथ देखा। लोटे में स्याही नहीं थी। सारी स्याही मिठाई जैसी हो गयी थी। सोमनाथ ने वह मिठाई राजकुमार के हाथ दी, राजकुमार ने उसे खा लिया।

"देखते हो न, राजकुमार! दवा के काली होने पर भी तुमने जैसे सोचा, वैसे घृणा करने लायक़ नहीं होती। वास्तव में वह मिठाई की बनी चीज़ है। मैं समझता हूँ कि तुम आइंदा काली दवा पीने से आपत्ति न करोगे।" सोमनाथ ने कहा।

राजकुमार ने खिसियाते हुए कहा– "रोज़ तुम अपने हाथों से दोगे तो मैं पिऊंगा, नहीं तो नहीं।"

दूसरे दिन सोमनाथ के हाथों से राजकुमार को दवा पीते देख सब लोग आश्चर्य में आ गये। इसी प्रकार एक सप्ताह तक राजकुमार दवा पीकर स्वस्थ हो गया। राजा ने सोमनाथ को सादर गहने व धन देकर उसका सत्कार किया।

सोमनाथ ने उन्हें ले जाकर अपनी पत्नी को दिया। उसकी पत्नी ने जादू के बारे में पूछा तो सोमनाथ ने यों कहा–

"मैंने कांच के लोटे के बाहर तेल के दीपक का काजल पोत कर लोटे के ऊपर एक इंच तक काजल पोंछ दिया। इसके बाद आधे लोटे तक मिठाई की बनी चीज़ें डाल दीं। लोटे के जिस भाग में काजल न था, उस ऊपरी भाग को पकड़ कर मैं राजकुमार के पास गया। उसे लोटे पर का काजल दवा जैसे दिखाई दिया। लोटे पर काला रूमाल ढक कर, मंत्र पढ़ते सारा काजल मैंने पोंछ दिया। रूमाल काला था, इसलिए उससे पोंछने पर भी उस पर मैलापन का पता न चला। समझ में आ गयी है न बात!" इसके बाद पति-पत्नी दोनों हँस पड़े।

माधो की अक्लमंदी

उन्नाव नामक गाँव में एक बार चोरों का दबदबा ज्यादा हो गया। कोई भी घर चोरों के हमले से बच न पाया। आखिर राजा ने विशेष दिलचस्पी ली और सभी चोर पकड़े गये।

बाद को गाँववालों को यह समाचार मालूम हो गया कि चोरों ने गाँव के सभी घरों को लूटा, मगर माधो का घर न लूटा। गाँववाले आश्चर्य में आ गये, सबने जाकर माधो से इसका कारण पूछा।

"माधो, तुम ने चोरों के हमलों से बचने के लिए क्या बंदोबस्त किया? हमें भी तो बताओ न?"

इस पर माधो ने ठहाका मार कर कहा–"वैसे बात कुछ नहीं, आप सब लोग दर्वाजे बंद कर सो गये, मैं सारे दर्वाजे खोल कर आराम से सो गया। मेरे इस व्यवहार को देख चोरों को संदेह हो गया और वे मेरे घर की तरफ़ फटके तक नहीं।"

गाँववाले सब आश्चर्य में आ गये।

विदेशी व्यापारी

एक गाँव में जंबुनाथ नामक एक मुंशी था। वह एक बनिये के व्यापार के सारे काम-काज देखा करता था। व्यापार के मामलों में वह बड़ा चालाक और अनुभवी था। साथ ही वह ईमानदार भी था। उसका उद्देश्य था कि मालिक का नमक खाते हैं तो जहाँ तक हो सके, ज्यादा लाभ कमाकर उन्हें देना है। वह जहाँ जो चीज़ सस्ते में मिलती, वहाँ जाकर वह माल ख़रीदता और अच्छे भाव पर बेच देता। इसी तरह व्यापार के अन्य खर्च कम करने में भी वह सतर्क रहा करता था।

कुछ साल बाद जंबुनाथ का मालिक मर गया और उसका पुत्र सोमगुप्त उस व्यापार का मालिक बना। सोमगुप्त दूरंदाज न था, उल्टे वह कंजूस भी था। उसका विचार था कि ख़र्च कम करने से लाभ ज्यादा होगा। वह यह नहीं जानता था कि ज़रूरी खर्च क्या हैं? क़िफ़ायती करने के ख्याल से उसने जंबुनाथ की तनख्वाह कम कर दी और उसका काम बढ़ा दिया। अगर उसके कहे अनुसार समय पर काम न होते तो सोमगुप्त जंबुनाथ को भला-बुरा कह बैठता था। मगर फिर भी जंबुनाथ सब्र करके सोमगुप्त के यहाँ काम करते आ रहा था।

इससे सोमगुप्त का संदेह जंबुनाथ के प्रति बढ़ता गया। कई सालों से जंबुनाथ के द्वारा ही उसके पिता का व्यापार नफे पर चलता आ रहा था, यह बात सोमगुप्त भलीभांति जानता था। फिर भी उसने सोचा कि मौक़ा पाकर जंबुनाथ ने बहुत बड़ी रक़म हड़प ली होगी। इसलिए उसने जंबुनाथ को काम से हटाते हुए उस पर झूठा आरोप लगाकर धमकी दी–

अरुणकुमार दत्त

"गोदाम में दस बोरे धान कम है, तुमने ही हड़प लिया होगा। यदि तुम तीन दिन के अन्दर उसका दाम न चुकाओगे तो मैं थाने में जाकर तुम पर फ़रियाद करूँगा।"

यह आरोप सुनकर जंबुनाथ बड़ा दुखी हुआ। उसकी समझ में न आया कि उसके द्वारा कौन-सी गलती हो गयी है, उस पर चोरी का इलज़ाम क्यों लगाया गया है और उसे नौकरी से क्यों हटाया गया है?

इन्हीं दिनों में सोमगुप्त के पास एक विदेशी व्यापारी आया और बोला– "महाशय, मैं समुद्र पार से आया हूँ। यहाँ का माल खरीदना चाहता हूँ, आपके पास मेरे काम का कोई माल हो तो खरीदूँगा। मगर मेरे पास आपके देश का धन नहीं है। इसलिए मैं सोने के टुकड़े दूँगा। अगर मुझे माल पसंद आया तो आप जो दाम बतायेंगे, उसी दाम पर खरीदूँगा।"

सोमगुप्त को ये बातें सुनने पर बड़ी खुशी हुई। अगर साधारण व्यापार होता तो जंबुनाथ देख लेता। बहुत सारा धन हड़प लेता, अब अच्छा हुआ कि मैंने उसे नौकरी से हटाया। सोमगुप्त ने अपने मन में सोचा।

उसी रात को विदेशी व्यापारी ने अपने लिए आवश्यक माल खरीदा, सोने के टुकड़े गिनकर थैली में डाल दिये, थैली
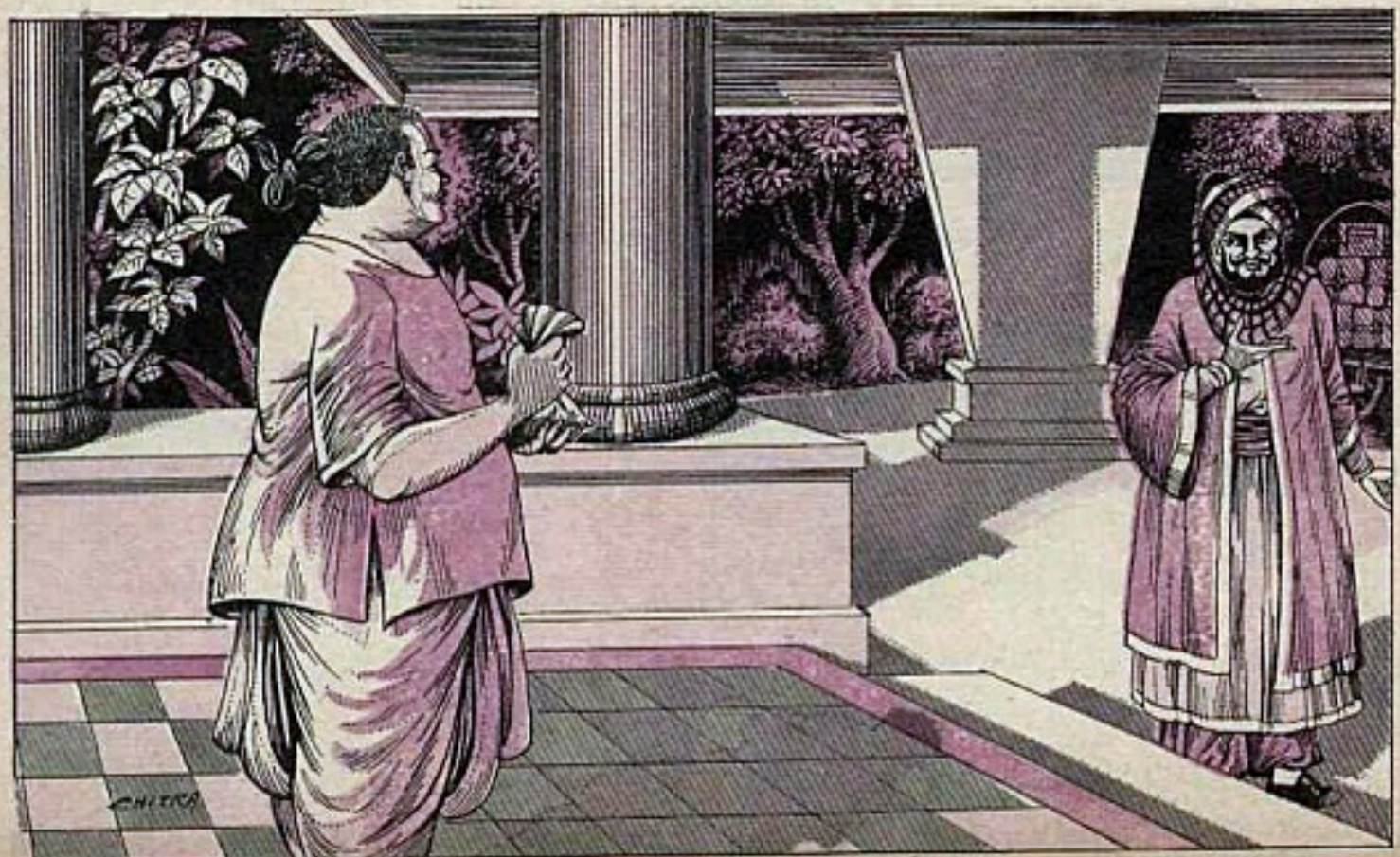
सोमगुप्त के हाथ देकर माल लेकर चला गया। सोमगुप्त ने उस रात को नींद में अच्छे अच्छे सपने देखे।

मगर दूसरे दिन नींद से जागते ही उसे संदेह हुआ। क्या विदेशी व्यापारी का दिया हुआ सोना खरा है? उसमें मिलावट तो नहीं होगी न? यह संदेह दूर करने के लिए सोमगुप्त सोने का एक टुकड़ा लेकर सुनार के पास गया और उसकी जांच करायी। सुनार ने कसौटी पर कसकर बताया कि वह सोना नहीं है, बल्कि सोने का मुलम्मा चढ़ाया गया पीतल है। यह बात सुनते ही सोमगुप्त वहीं पर बेहोश हो गया।

असल में विदेशी व्यापारी के वेष में आया हुआ व्यक्ति जंबुनाथ का पुत्र था। अपने पिता के साथ जो अन्याय हुआ, उसकी प्रतिक्रिया करने के ख्याल से उसने ऐसा किया था। घर लौटकर उसने अपने पिता जंबुनाथ से सारी बात बतायी। जंबुनाथ ने अपने पुत्र को डांटा।

"तुम्हारी ईमानदारी का फल तुम्हें क्या मिला? तुम को यह जानना चाहिए कि किसके साथ कैसा व्यवहार करना है?" जंबुनाथ के पुत्र ने अपने पिता को समझाया।

मगर जंबुनाथ का स्वभाव दूसरों के व्यवहार को देख बदलने वाला न था। वह दूसरे दिन सोमगुप्त का सारा माल लेकर उसके घर पहुंचा। सोमगुप्त चिंता में डूबे बैठा हुआ था। उसे जब यह मालूम हो गया कि उसका पूरा माल वापस आ गया है तब वह फूला न समाया। जंबुनाथ अपने बेटे की करनी के लिए माफ़ी मांग रहा था, फिर भी उसे अनसुनी करके सोमगुप्त बोला– "आह, जबुनाथ, तुम कैसे ईमानदार हो? अगर तुम कल होते तो मैं यह धोखा न खाता। मैंने नाहक़ तुम्हें गलत समझा था, पर असली बात यह है कि तुम्हारे बिना यह व्यापार बिलकुल न चलेगा। आज से तुम पहले की तरह यह व्यापार संभालते जाओ।"
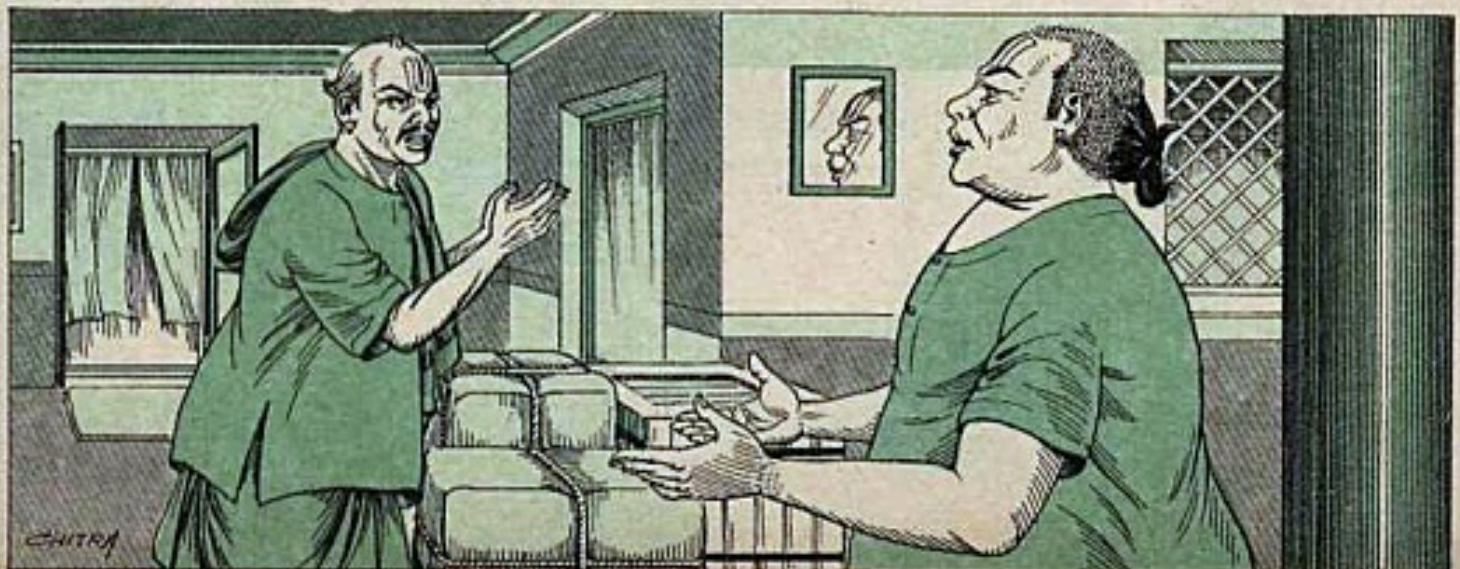
आजीविका

एक गांव में सुजानसिह् नामक एक किसान था। उसने भेड़ बेच कर काफ़ी धन इकट्ठा किया। उसने अपने खेत में एक कुआं खुदवाना चाहा। मगर कई सालों से इकट्ठा किया हुआ धन लगा कर कुआं खुदवाने को उसका मन नहीं मानता था। इसलिए इच्छा के होते हुए भी वह अपने विचार को टालता गया

इतने में अकाल पडा। पानी की मांग बढ़ी। लोग खाने के अभाव में तड़पने लगे। तब सुजानसिह् ने सोचा कि कुआं खुदवाने का यही एक अच्छा मौक़ा है। क्योंकि मज़दूर बड़ी तादाद में सस्ती मजदूरी पर मिल सकते हैं। काम भी जल्दी पूरा हो सकता है। ऐसे वक़्त में ख़र्च किया गया धन दुगुना लाभ पहुँचा देगा।

इस विचार के आते ही सुजानसिह् ने अपनी तिजोरी खोल दी। राज को बुलवा भेजा और उनके नेता से कुआं खुदवाने का सारा प्रबंध किया।

अकाल के समय काम मिल गया था, इस खुशी में राजों ने बड़े ही उत्साह के साथ कुए का काम शुरू किया। दस-बारह फुट तक खोदने पर चट्टान दिखाई दी।

फिर क्या था, सुजानसिह् का कलेजा बैठ गया। उसका धन बेकार गया, इसलिए वह दुख में डूब गया।

राज भी यह सोचकर डर गये कि काम रुक जायगा। एक-दो महीने काम रहा तो वे अकाल से बच सकते हैं।

जैसे उनका डर था, वैसे सुजानसिह् ने काम रोक दिया।

"यह चट्टान गहराई तक नहीं है। एक तह मात्र है। उसके नीचे पानी का सोता निकल आ सकता है। अब आप

देवेन्द्र लाल

काम न रोकियेगा।" राजों के नेता ने बताया। पर सुजानसिंह कुछ जवाब दिये बिना ही अपने घर चला गया।

उस रात को राजों के नेता को नींद न आयी। वह सोचता रहा कि किसी तरह अपने साथियों को चार पैसे मिल जाय। आखिर वह एक निर्णय पर पहुँचा। उसने तुरंत अपने साथियों को पुकारा। हर एक के हाथ एक घड़ा देकर कहा कि किसी गड्ढे में से पानी लाकर कुएँ में डाल दे। वे सब दो फुट तक पानी डाल कर चले गये। नीचे चट्टान थी, इसलिए पानी सूख नहीं गया।

सुजानसिंह दूसरे दिन अपनी आदत के अनुसार कुएँ के पास गया। कुएँ के भीतर झांक कर देखा तो उसे पानी दिखाई दिया। वह उछल पड़ा, जल्दी राजों के नेता के घर जाकर बोला—"तुमने सच बताया, कुएँ में पानी आ गया है, मैं काम नहीं रोकूंगा। तुम सब आ जाओ, फिर से काम शुरू करो।"

"नहीं साहब! हम सब किसी दूसरे गाँव में जाना चाहते हैं। वहाँ पर हमें साल-भर काम मिल जाएगा। आप दूसरों से काम लीजिए।" राजों के नेता ने जवाब दिया।

"ऐसा नहीं हो सकता, यह काम तुम लोगों के द्वारा ही पूरा होना चाहिए।" सुजानसिंह ने अनुरोध किया।

"तब तो मजूरी पहले ही दिलवा दीजिए। वरना मेरे साथी मेरी बात नहीं सुनते। आपका काम भी बनेगा नहीं।" राजों के नेता ने बताया।

और छे फुट खोदने की मजदूरी हिसाब करके सुजानसिंह ने राजों के नेता के हाथ दे दिया। राजों ने छे फुट तक हिसाब के अनुसार चट्टान खोद दी। पहले जो पानी दिखाई दिया था, वह कभी सूख गया था। इसके बाद वह पानी बिलकुल दिखाई न दिया और न चट्टान ही खतम हुई। राजों को अकाल के समय आजीविका प्राप्त हुई।
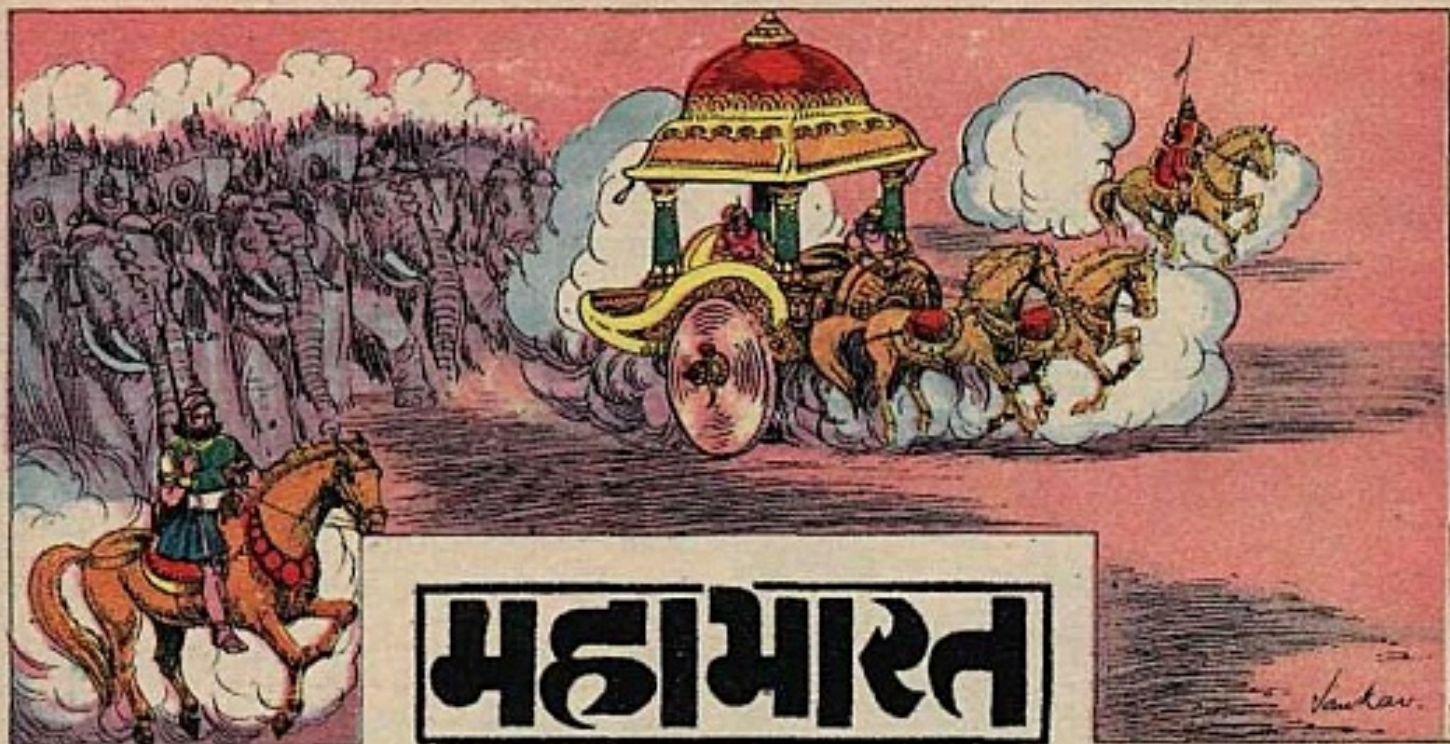
युद्ध ज़ोरों के साथ चल रहा था। अर्जुन को अभी तक पता न था कि उसका पुत्र ऐरावंत वीर स्वर्ग को प्राप्त हो गया है। वह कौरव दल के वीरों का वध करने में निमग्न था। दूसरी ओर भीष्म पितामह पांडव सेना को थर्रा रहा था। भीम, धृष्टद्युम्न तथा सात्यकी अपने अनुपम पराक्रम का परिचय दे रहे थे। द्रोण की निपुणता को देखते ही बनता था।

ऐरावंत की मृत्यु को देख भीम का पुत्र घटोत्कच क्रोध में आया। भयंकर नाद करके अपने हाथ में चमकनेवाला एक शूल लेकर राक्षस गणों को साथ ले युद्ध भूमि की ओर बढ़ा। उसके विकराल रूप को देख कौरव सेनाएँ घबरा उठीं। इसे देख दुर्योधन भीषण युद्ध के लिए सन्नद्ध हो गया। घटोत्कच के सामने आकर सिंहनाद कर उठा। दुर्योधन के पीछे वंगदेश का राजा दस हज़ार हाथियों के साथ आ पहुँचा। उस गजसेना को देखते ही घटोत्कच क्रोध में पागल हो गया। उसके राक्षस योद्धा गजसेना पर आक्रमण करके ध्वंस करने लगे। गज योद्धाओं को चकित हो खड़े देख दुर्योधन कुपित हो बाणों के साथ राक्षसों का वध करने लगा। तब घटोत्कच ने स्वयं दुर्योधन पर धावा बोल दिया।

उस युद्ध में घायल होकर खून से लतपथ घटोत्कच ने दुर्योधन का वध करने के लिए एक भारी शक्ति को हाथ में

यह बात सुनते ही द्रोण, सोमदत्त, बाह्लिक, सैंधव, कृपाचार्य, भूरिश्रव, शल्य, बृहद्बल, अश्वत्थामा, विकर्ण, चित्रसेन, विविंशती इत्यादि महारथियों ने अनेक रथों को साथ ले घटना स्थल पर प्रवेश किया। उन्होंने देखा कि घटोत्कच दुर्योधन पर वार करते उसे भगा रहा है। उन वीरों ने घटोत्कच को रोककर उसके साथ युद्ध किया। उस युद्ध में घटोत्कच ने अनेक शत्रु वीरों को घायल बनाया। पांडव वीरों ने घटोत्कच की सहायता की। कौरव योद्धाओं में से कुछ लोगों के कवचों में छेद हो गये, कुछ योद्धा घायल हुए, कुछ योद्धाओं के सारथी मर गये। तब वे सब युद्धक्षेत्र से हट गये।

लिया। उस समय वंगदेश के राजा ने अपने भारी हाथी को दुर्योधन के रथ के आगे खड़ा कर दिया। घटोत्कच के द्वारा फेंकी गयी शक्ति के वार से वह मत्त हाथी नीचे गिरा। वंगदेश का राजा हाथी पर से नीचे कूद पड़ा और कहीं सेना के बीच भाग गया। मौक़ा पाकर घटोत्कच अट्टहास कर उठा और भयंकर गर्जन करते दुर्योधन को सताने लगा।

घटोत्कच का गर्जन सुनकर भीष्म ने द्रोणाचार्य से कहा—"घटोत्कच दुर्योधन को सता रहा है। उसका वध करना किसी के लिए संभव नहीं है। तुम सब जाकर दुर्योधन की रक्षा करो।"

घटोत्कच इससे चुप न रहा। उसने फिर से दुर्योधन पर आक्रमण किया। इसे देख कौरव वीर भी घटोत्कच से जूझ पड़े। फिर भी घटोत्कच ज़रा भी विचलित न हुआ, उसने सबके साथ युद्ध किया।

युधिष्ठिर को जब यह समाचार मालूम हुआ, तब उसने भीम से कहा—"तुम्हारा पुत्र घटोत्कच शक्ति से बढ़कर दारुण युद्ध कर रहा है। भीष्म पांचालों का निर्मूल करने के प्रयत्न में हैं, इसलिए अर्जुन उनके साथ युद्ध कर रहा है।" इस पर भीम ने सोचा कि अर्जुन की सहायता करने की

अपेक्षा घटोत्कच की मदद करना ज्यादा आवश्यक है। वह अति वेग के साथ घटोत्कच के निकट पहुँचा। उसके साथ अभिमन्यु, उप पांडव, नील, सत्यधृती, सौचित्री, श्रेणीमंत, वसुतास इत्यादि भी चल पड़े। उभय दल के वीरों के बीच घमासान लड़ाई हुई। उस लड़ाई में पाडवों का हाथ ही ऊँचा रहा।

इस पर दुर्योधन रुष्ट हुआ और उसने भीम पर धावा बोल दिया। उस युद्ध में भीम चोट खाकर रथ पर गिर पड़ा। इतने में घटोत्कच, अभिमन्यु इत्यादि पांडव वीरों ने दुर्योधन को घेर लिया। दुर्योधन को खतरे में फँसे देख द्रोण उसकी मदद के लिए कुछ कौरव वीरों को साथ ले आया। इस बार के युद्ध में घटोत्कच ने राक्षसी मायाओं का प्रयोग करके शत्रु को चकित कर दिया। घटोत्कच के वारों से घबराकर कौरव सेनाएँ तितर-बितर हो गयीं और शिविरों की ओर भाग गयीं।

उस वक़्त दुर्योधन ने भीष्म के पास जाकर कहा—"दादाजी, जैसे पांडवों ने कृष्ण पर विश्वास किया, वैसे हमने भी आप पर भरोसा करके युद्ध प्रारंभ किया है। घटोत्कच एवं भीम ने मिलकर मेरी घोर पराजय की। यह अपमान मुझे जला रहा है। किसी भी उपाय से ही सही, इस राक्षस का अंत करना होगा। हमारा यह उपकार कीजिए।"

इस पर भीष्म ने दुर्योधन से कहा—"बेटा, तुम युधिष्ठिर या भीम अथवा नकुल और सहदेवों के साथ युद्ध करो। एक राजा का दूसरे राजा के साथ युद्ध करना राजधर्म है। राक्षस घटोत्कच के साथ युद्ध करने के लिए हम सब तैयार हैं ही। उसके साथ युद्ध करने के लिए तुम भगदत्त को भेज दो। वह इंद्र के समान है।" फिर भीष्म ने भगदत्त से कहा—"तुमने अनेक राक्षसों के साथ युद्ध किया है। घटोत्कच का सामना करने के लिए तुम ही एक योग्य व्यक्ति हो। तुम

बैठा। भगदत्त ने क्रमशः सबको बुरी तरह से मारा। भीम का सारथी रथ पर ही बेहोश हो गया। इतने में अर्जुन भीम और घटोत्कच के निकट आया। उसने भी घोर युद्ध किया। भगदत्त अपने हाथी के द्वारा पांडव सेना को कुचलवा देते आगे बढ़ा और उसने युधिष्ठिर के साथ संग्राम किया।

उस वक़्त ऐरावंत की मौत की बात भीम और अर्जुन को मालूम हो गयी। अर्जुन बड़ा दुखी हुआ! उसने कृष्ण से निवेदन किया कि उसके रथ को कौरव सेना के बीच ले जाये; पुन दोनों दलों के बीच समर प्रारभ हुआ। उस संग्राम में भीम ने व्यूढोंस्क, कुंडली, अनाधृष्टी, कुंडभेदी, वैराट, दीर्घनेत्र, दीर्घबाहु, सुबाहु, कनकध्वज नामक व्यक्तियों तथा धृतराष्ट्र के पुत्रों को भी क्रमशः मार डाला। जब भीम उनका वध कर रहा था, तब द्रोण ने उस पर बाणों की वर्षा की, फिर भी उसे रोक नहीं पाया। इतने में गहरा अंधकार फैलने लगा। तब उभय पक्षों के योद्धा युद्ध रोककर शिविरों में चले गये।

इसके उपरांत दुर्योधन, शकुनी और दुश्शासन ने कर्ण के साथ मंत्रणा की। उस संदर्भ में दुर्योधन ने कर्ण से बताया— "न मालूम क्यों, भीष्म, द्रोण और शल्य

अभी जाकर हमारे देखते उसका वध कर डालो।"

भीष्म के मुँह से यह बात सुनते ही भगदत्त सुप्रतीक नामक अपने भारी हाथी पर सवार हो पांडव योद्धाओं के साथ युद्ध करने निकल पड़ा। उस वक़्त महा दारुण युद्ध हुआ। भगदत्त भीम से जूझ पड़ा। सुप्रतीक को अत्यंत वेग के साथ भीम के रथ की ओर बढ़ते देख केकय, उप पांडव, अभिमन्यु, दशर्ण राजा क्षत्रदेव, चेदि राजा चित्रकेतु वगैरह ने उस हाथी पर बाणों की वर्षा की। मगर सुप्रतीक पांडव सेना का सर्वनाश करने लगा। इसे देख घटोत्कच भगदत्त पर हमला कर

पांडवों को पीड़ित नहीं कर पा रहे हैं। पांडव पराजय न पाकर हमारी सेना का संहार करते जा रहे हैं। दिन प्रति दिन हमारी सेना का क्षय होता जा रहा है। भगवान और पांडव भी मेरा पराभव करते जा रहे हैं। मेरी समझ में नहीं आ रहा है कि मैं पांडवों को कैसे पराजित कर सकता हूँ?"

इस पर कर्ण ने समझाया-"भीष्म को युद्ध से विश्राम लेने दीजिए, तब आकर मैं सोमकों के साथ पांडवों का भी बध कर डालूंगा। मैं भीष्म को अपने पराक्रम का परिचय दूंगा। भीष्म पांडवों के प्रति स्नेह रखते हैं, इसलिए वे कभी उनका बध नहीं करेंगे और न कर सकेंगे, इसलिए आप भीष्म के शिविर में जाकर उन्हें समझाइये कि वे अस्त्र-सन्यास करे। समझिये कि भीष्म के अस्त्र-सन्यास करने के उपरांत दूसरे ही क्षण पांडव मर गये।"

इसके बाद दुर्योधन अपने भाइयों तथा अन्य लोगों को साथ ले भीष्म के शिविर में पहुँचा और बोला-"दादाजी, मैं कह नहीं सकता हूँ कि आप मुझ पर नाराज़ हैं या मेरा दुर्भाग्य है कि आप पांडवों की रक्षा करते जा रहे हैं। यदि आपका उद्देश्य उनकी रक्षा करना है तो आप युद्ध करना त्यागकर युद्ध का भार कर्ण को

सौंप दीजिए। वह और उसके रिश्तेदार सब पांडवों को हरायेंगे।"

ये बातें भीष्म के मन में शूलों की भांति चुभ गयीं। उनकी आखें लाल हो गयीं। वे ऐसे दीखने लगे कि मानो तीन लोकों को दग्ध करने जा रहे हो। तब बोले-"हे दुर्योधन, ऐसी बातें तुम क्यों करते हो? मेरे प्रयत्न में कौन-सी तृटि है? मैं शत्रु का अपार नष्ट कर रहा हूँ। क्या तुम नहीं जानते कि अर्जुन महान वीर है? गंधर्व जब तुमको बंदी बनाकर ले गये, तब कर्ण ने तुम्हारी कैसी सहायता की? क्या तुम्हारे भाइयों के साथ वह भाग नहीं गया? उत्तर गोग्रहण के समय

क्या अकेले अर्जुन ने हम सबको नहीं हराया? उसने इंद्र के द्वारा भी पराजित न कर सकनेवाले निवात और कवच को नहीं हराया? तुमने यह युद्ध जान-बूझकर मोल लिया है! तुम अपने शत्रु का आप ही वध करो। हम भी देखकर प्रसन्न हो जायेंगे। मेरी बात रही, अब, मैं शिखंडी को छोड़ बाक़ी सब सोमक और पांचालों का वध कर डालूंगा, अन्यथा मैं मर जाऊँगा। इससे अधिक मैं कुछ नहीं कह सकता। कल मैं महायुद्ध करने जा रहा है, तुम शिविर में जाकर सो जाओ।"

दुर्योधन यह बात सुनकर संतुष्ट हुआ। दूसरे दिन सवेरे जागते ही अपने पक्ष के राजाओं से बोला–"आज भीष्म पितामह भयंकर युद्ध करने जा रहे हैं।" इसके बाद दुश्शासन से कहा–"आज हमारी विजय होनेवाली है। हमें भीष्म की रक्षा करनी होगी। इसमें शकुनी, शल्य, कृपाचार्य, द्रोण और विविंशती की सहायता की आवश्यकता है।"

नौवें दिन युद्ध प्रारंभ हुआ। भीष्म ने सर्वतोभद्र नामक व्यूह में कौरव सेनाओं को खड़ा किया। पांडवों ने उसके विरुद्ध प्रतिव्यूह की रचना की। युद्ध के शुरू होते ही अभिमन्यु आवेश में आ गया। उसने द्वितीय अर्जुन की भांति कौरव सेनाओं, सैंधव, कृपाचार्य, द्रोण, अश्वत्थामा जैसे महावीरों को तितर-बितर कर दिया। तब दुर्योधन ने राक्षस वीर अलंबस को अभिमन्यु के साथ युद्ध करने के लिए प्रेरित किया।

अभिमन्यु और अलंबस के बीच घोर संग्राम हुआ। अलंबस ने भयंकर युद्ध तो किया, मगर वह अभिमन्यु के सामने ठहर नहीं पाया। माया युद्ध शुरू किया, उसमें भी सफल न हो सका। आखिर पराजित हो भाग गया। इसके बाद अभिमन्यु कौरव सेनाओं का नाश करते आगे बढ़ा।

उस वक़्त भीष्म ने अभिमन्यु का सामना किया। उसी वक़्त अर्जुन भी

अभिमन्यु के पास आ पहुँचा। भीष्म के साथ अनेक महावीर थे। इसी प्रकार अर्जुन के साथ कई योद्धा थे। दोनों दलों के बीच भीकर समर हुआ।

दूसरी ओर से भगदत्त तथा श्रुतायु ने गजसेना के साथ भीम पर हमला किया। भीम गदा लेकर रथ पर से उतरा और अपने चारों तरफ़ घेरे हुए हाथियों तथा गज योद्धाओं पर अपने गदे का प्रहार किया। फिर क्या था, गजसेना भाग गयी।

उस दिन भीम ने भयंकर युद्ध किया। पांडवों की सेना में भी कई सैनिक मारे गये, पांडव दल के कई सैनिक अस्त्र फेंककर भाग गये। इतने में सूर्यास्त हो गया जिस से युद्ध बंद हुआ।

आज भीष्म का दारुण युद्ध देख पांडव घबरा गये। युधिष्ठिर के मन में भी युद्ध के प्रति विरक्ति पैदा हो गयी। उसने कृष्ण के पास जाकर पूछा कि अब क्या किया जाय! कृष्ण ने युधिष्ठिर को सांत्वना देते हुए समझाया—"तुम चिंता न करो। अगर अर्जुन ने भीष्म का वध न किया तो मैं भीष्म का वध करूँगा। यदि भीष्म मर गये तो तुम्हारी विजय को रोकनेवाली शक्ति कोई न होगी। तुम्हारा शत्रु मेरे भी तो शत्रु है! अर्जुन चाहेगा तो जरूर भीष्म का वध कर सकता है। यह उसका कर्तव्य भी है।"

यह बात सुनकर युधिष्ठिर ने कृष्ण से कहा—"भीष्म पितामह हमारे हितैषी हैं। वे हमारी बिजय की कामना करनेवाले हैं। उन्होंने बताया है कि भले ही वे हमारे पक्ष में युद्ध न करे, मगर हमारा हित चाहेंगे। हम उनके पास जाकर पूछेंगे कि उनकी मृत्यु कैसे हो सकती है? ऐसे महा पुरुष का हम वध करना चाहते हैं, क्षत्रिय-धर्म कैसा पाप पूर्ण है!"

कृष्ण इन बातों पर प्रसन्न हुए और बोले—"भीष्म जैसे महा वीर की मृत्यु कैसे हो सकती है, यह बात वे ही जानते हैं। हम उन्हीं के पास जाकर पूछें!"

मित्र-भेद

[७]

जुलाहे की औरत ने जो तिकड़मबाजी की, उसे देवशर्मा ने अपनी आँखों से देखा और उसने मन में सोचा–"वाह, औरतें कैसी धूर्त होती हैं! उनकी अक़्लमंदी के सामने शुक्राचार्य और बृहस्पति किसी काम के नहीं।"

इस बीच नाइन कटी हुई नाक को हाथ में लेकर यह सोचते घर पहुँची कि इस कटी हुई नाक को क्या किया जाय और इस घटना को कैसे छिपाया जाय!

इतने में सवेरा हो गया। रात भर राजमहल में रहनेवाला उसका पति घर लौट आया और बोला–"अरी, मेरे उस्तरों की थैली लेती आओ, मुझे शहरवालों को हज़ामत करने जाना है।" नाइन पहले से ही अक़्लमंद थी, नाक कट जाने की वजह से उसकी अक़्ल दुगुनी हो गयी थी, इसलिए उसने एक उस्तरा मात्र निकालकर नाई की ओर फेंक दिया। नाई को इसलिए गुस्सा आया कि उसने सारी पेटी माँगी तो उसकी औरत ने एक ही उस्तरा दे दिया है, तब गुस्से में आकर नाई ने उस उस्तरे को नाइन की ओर फेंक दिया। तुरंत नाइन ने हाथ ऊपर उठाकर पुकारना शुरू किया–"बचाइये, बचाइये, मेरे दुष्ट पति ने मेरी नाक काट दी है।"

यह पुकार सुनकर सिपाही दौड़कर आये, नाई को खूब पीटा और उसे, उसकी पत्नी तथा कटी हुई नाक को ले जाकर न्यायाधिकारी के सामने हाजिर किया, तब बोले–"इस दुष्ट ने इस नारी रत्न को अकारण तंग किया है। यह तो एक

अंतिम पृष्ठ का चित्र

जघन्य अपराध है। इसे जो सजा वाजिब है, सो दे दीजिए।"

न्यायाधिकारी ने नाई से पूछा–"तुमने यह अपराध क्यों किया है? आखिर तुम्हारी औरत ने कौन-सी गलती की है?"

नाई पहले से ही बेवकूफ़ था, बात उसकी समझ में न आयी, इसलिए वह चुप रह गया। न्यायाधिकारी ने दण्डविधान की पुस्तकें पलटकर नाई को मौत की सजा सुनाई। नाई को बधिक वध स्थान पर ले गये। देवशर्मा ने न केवल यह खबर सुनी थी, बल्कि वध स्थान की ओर जानेवाले नाई को भी देखा। वह न्यायाधिकारी के पास दौड़कर पहुँचा और बोला–"महाशय, इस भोले नाई को अकारण आप लोग मारने जा रहे हैं। मैं सच्ची बात बताता हूँ, सुनिये। अनावश्यक बातों में दखल देकर सियार, मैं तथा नाइन ने खतरे मोल लिये हैं।"

"सो कैसे?" न्यायाधिकारी ने देवशर्मा से पूछा।

देवशर्मा ने न्यायाधिकारी को भेड़ों की कहानी, अपना सोना हड़पनेवाले आषाढ़भूति की कहानी और शराबी जुलाहे की कहानी सविस्तार सुनाई।

न्यायाधिकारी ने देवशर्मा की बताई सभी कहानियों को आश्चर्य एवं उत्साह के साथ सुना और तुरंत नाई को मुक्त कर दिया। मगर न्यायाधीश ने नाई की पत्नी को मुक्त नहीं किया, उसने नाक खोकर थोड़ी सजा पा ली थी, इसलिए उसके कान भी कटवाकर उसकी दुष्टता के लिए पूरी सजा दी।

सियार और नाइन ने जो सजाएँ पायीं, उन्हें देखने के बाद देवशर्मा को अपने सोना खोने की चिंता जाती रही। वह फिर से अपने मठ को लौट आया, शिवजी के सामने साष्टांग दण्डवत करके बोला–"महादेव, तुम्हारी कृपा से हम तीनों में कम सजा मैंने ही पायी है। खून का प्यासा होकर सियार अपनी जान ही खो बैठा। नाइन अपनी करनी के लिए नाक

और कान खा बठा, मैं आपके अनुग्रह से सिर्फ़ सोना ही खो बैठा। अब मैं कभी उसकी चिंता नहीं करूँगा..."

दमनक के मुँह से देवशर्मा की कहानी सुनकर करटक ने पूछा–"अच्छी बात है, अब हमें क्या करना है?"

इस पर दमनक ने समझाया–"गलत रास्ते पर जानेवाले हमारे राजा को सही रास्ते पर लाना है। हमारे राजा पिंगलक के अब कोई सलाहकार नहीं हैं। केवल घास चरने वाले बैल की दोस्ती और सलाह को मानकर हमारे राजा घास चरने की नीति को अपना रहे हैं। उन्हें इस मार्ग से हटाना है।"

"हम जैसे दुर्बल व्यक्तियों के लिए यह कैसे मुमक़िन है?" करटक ने पूछा।

"जब शारीरिक बल काम नहीं देता, तब युक्तियाँ काम देती हैं। क्या भयंकर सर्प को मार डालने के लिए कौआ सोने की माला को काम में नहीं लाया?" दमनक ने जवाब दिया।

"वह कहानी कैसी?" करटक ने पूछा।

दमनक ने यों सुनाया:

साँप को मारने वाले कौए की कहानी

एक प्रदेश में एक बहुत बड़ा बरगद का पेड़ था। उस पर कौए की एक जोड़ी रहती थी। उन कौओं के बच्चों

को एक साँप खाया करता था। बहुत समय से उस पेड़ पर रहने वाले कौओं को इस बात की चिंता सता रही थी कि उसके बच्चे बच नहीं रहे हैं, फिर भी उन्हें उस पेड़ को छोड़कर जाने की इच्छा न हुई।

साँप बराबर पेड़ पर चढ़ आता, पंख न उगे हुए कौए के बच्चों को खा जाता। इसलिए कौए का एक भी बच्चा बचता न था। आखिर मादा कौए ने नर कौए के पैरों पर गिरकर बिनती की–"नाथ, दुष्ट सर्प हमारे बच्चों को खाता जा रहा है, हमारे होनेवाले बच्चों की भी यही हालत होगी। इसलिए हम और किसी

जगह जाकर दूर पर एक और पेड़ पर अपना निवास बनायेंगे। तुम जानते हो कि अपने बच्चों का प्यार कैसा होता है और उनके मरने पर कैसा दुख होता है! इसलिए हम इस जगह को छोड़ दूसरी जगह चले जायेंगे।"

इस पर नर कौए ने समझाया—"प्यारी, हम कई सालों से इसी पेड़ के आश्रय में रहते आये हैं। इसलिए इस पेड़ को छोड़ने की मेरी इच्छा नहीं हो रही है। मुट्ठी भर घास और अंजुली भर पानी चाहने वाला हिरण जहाँ भी जी सकता है; मगर वह सब प्रकार के खतरों को सहन कर अपने जन्मस्थान जंगल में ही निवास करता है। हिरण भी जो काम नहीं करता, उसे क्या हम अक़्ल रखनेवाले कौए क्यों कर करें? मैं कोई न कोई उपाय करके उस दुष्ट सांप को मार डालूंगा।"

"वह ज़हरीला सांप है। उसे कैसे मारोगे?" मादा कौए ने पूछा।

"मैं खुद यह काम न कर सकूं तो क्या हुआ? धर्मशास्त्र तथा राजनीति के उद्दण्ड पंडित मेरे मित्र हैं। मैं उनसे मंत्रणा करके, उनकी सलाह लेकर शीघ्र ही उस सांप को मार डालूंगा।" नर कौए ने हिम्मत बंधाई।

नर कौआ रोष में आकर उड़ गया, दूसरे पेड़ पर जाकर वहाँ निवास करने वाले अपने परममित्र सियार को बुलाकर अपनी विपदा सुनायी—"हे मित्र, हमारे बच्चों को खानेवाले सांप को मारने का कोई बढ़िया उपाय हो तो बताओ।"

इस पर सियार ने कहा—"मैंने एक अच्छा उपाय सोच रखा है। अब तुम्हारी तक़लीफ़ें दूर हो जायेंगी। बुरे काम करने वाले नदी के कगार पर रहनेवाले पेड़ की तरह अपने आप नष्ट हो जाते हैं। क्या पुराने ज़माने में एक बक सारी मछलियों को खाकर भी जब तृप्त न हुआ तो आखिर एक केकड़े के हाथ नहीं मरा?"

"वह कहानी कैसी?" नर कौए ने पूछा।

१४५. इङ्का मंदिर

दक्षिण पेरू में आंडीस पहाड़ों के बीच इङ्का जाति के रेड इंडियन रहा करते थे। स्पानिश के लोगों ने जब उन्हें हराया, तब वे रेड इंडियन जंगलों में भाग गये। इस चित्र में उन्हीं लोगों का एक मंदिर है।

Photo by Pranlal K. Patel
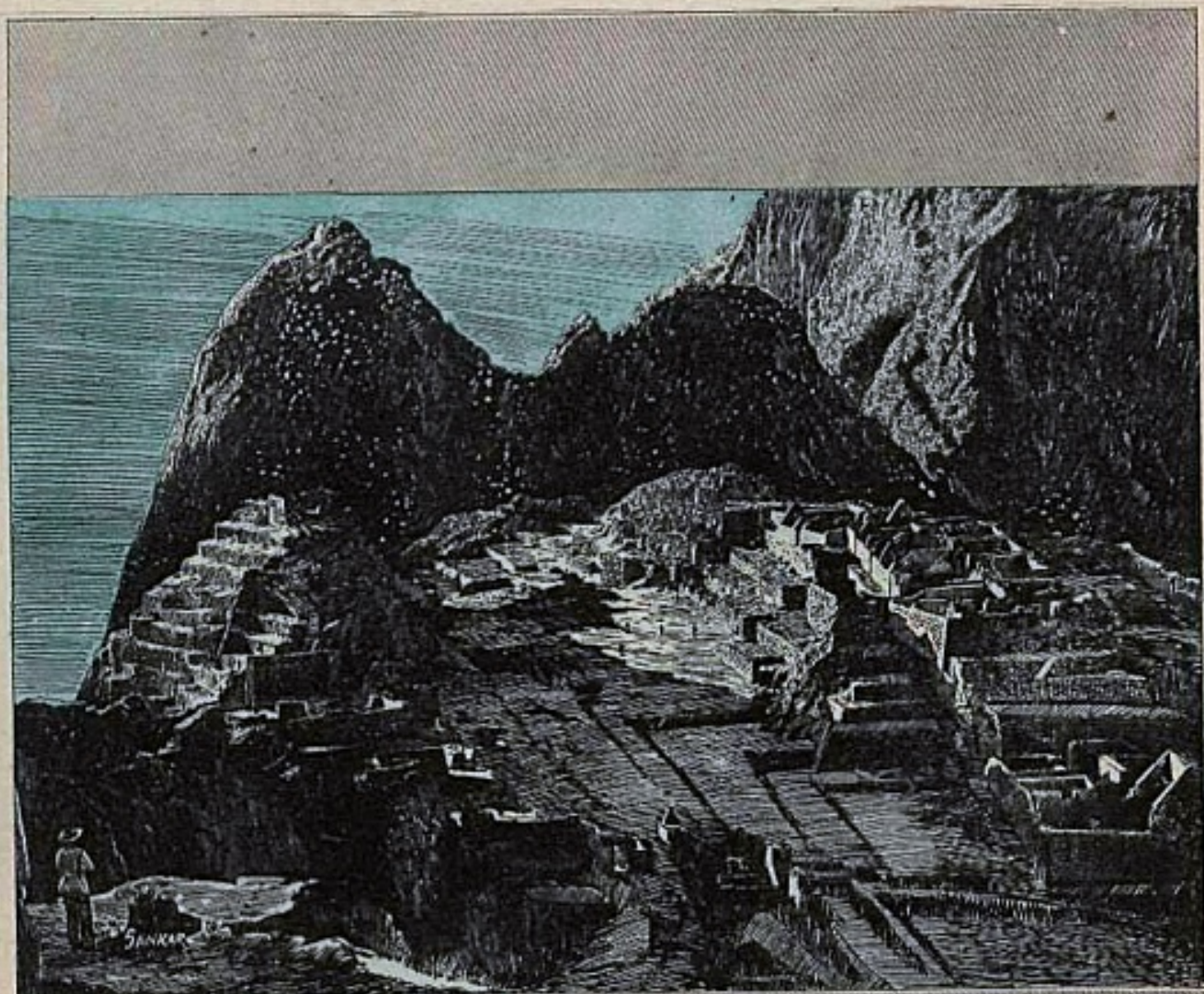
पुरस्कृत परिचयोक्ति

फूल गले का हार बने

प्रेषक : प्रकाश चन्द्रगुप्त

Photo by Nivas Jadhav
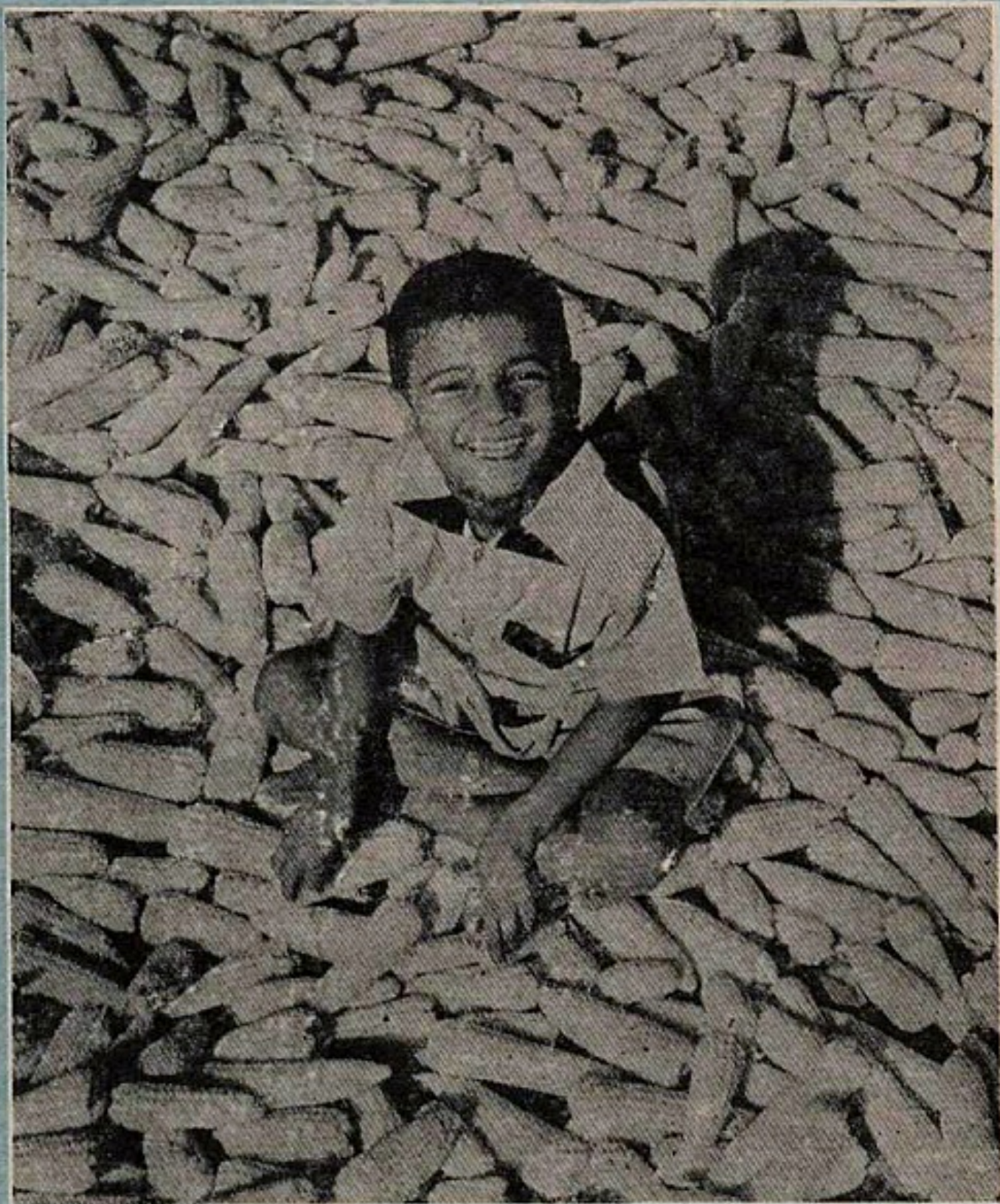
५, जी. पी. रोड, हाजी नगर
जि. २४ परगना, प. ब.

ये सब का आहार बने

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार २०)

★

★ परिचयोक्तियाँ फरवरी ५ तक प्राप्त होनी चाहिए । सिर्फ़ कार्ड पर ही लिख भेजें ।

★ परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्द की हों और परस्पर संबंधित हों, पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ अप्रैल के अंक में प्रकाशित की जायंगी !

चन्दामामा

इस अंक की कथा-कहानियाँ-हास्य-व्यंग्य

दूसरा मुखपृष्ठ :
संक्रांति पर्व आया है

तीसरा मुखपृष्ठ :
गन्ने खाते हैं

Printed by B. V. REDDI at The Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for Chandamama Publications, 2 & 3 Arcot Road, Madras-600026. Controlling Editor. 'CHAKRAPANI'

Photo by: **P. V. SUBRAMANYAM**

मित्र-भेद